कुरुक्षेत्र

वरी 1993 तीन रुपये

वर्ष 38 अंक 3 पौष-माघ शक 1914

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य, चित्र आदि भेजिए । अस्वीकृ त रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है । 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110 001 से कीजिए ।

सम्पादक : राम बोध मिश्र
सहायक सम्पादक : गुरचरण लाल लूथरा
उप संपादक : ललिता जोशी

विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक : जसवंत सिंह
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : शकुंतला
उत्पादन अधिकारी : एस. एम. चहल
आवरण साज-सज्जा : अल्का
एक प्रति : 3.00 रु० वार्षिक चन्दा : 30 रु०

फोटो साभार : फोटो प्रभाग, रमेश चन्द्र
ग्रामीण विकास मंत्रालय

विषय सूची

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुपालन की सार्थकता 2
मोहन दास नैमिशराय
ग्रामीण बेरोजगारी तथा मत्स्य पालन उद्योग 5
डॉ० गिरिजा प्रसाद दुबे
भारत में डेरी उद्योग की प्रगति एवं उपलब्धियां 8
गणेश कुमार पाठक
पशु सम्पदा का विकासः संभावनाएं एवं चुनौतियां 10
डॉ. जी. एस. शेखावत, डॉ. एम. के. जैन
ग्रामीण विकास का आधार पशु पालन 16
प्रभात कुमार सिंघल
बकरी पालन व्यवसाय की वृहद संभावनाएं 19
डॉ. वाणी विनायक, डॉ. सुनील अवस्थी
मत्स्य पालन : आजीविका का साधन 23
डॉ. पुष्पेश पाण्डेय
मेरा निर्णय सही था (सफलता की कहानी) 24
महेश चन्द्र श्रोत्रिय
मधुमक्खियों की प्रबंध व्यवस्था 25
डॉ. सी. जे. जुनेजा
ग्रामीण विकास में मत्स्य पालन की भूमिका 26
मंजु पाठक
ग्रामीण बेरोजगार युवक पशुपालन व्यवसाय अपनायें 30
डॉ. अनिल कुमार शर्मा
छोटे-छोटे धंधे कीजिए बेरोजगारी से बचिए 31
योगेश "नवीन"
आशा का प्रभात (कहानी) 33
डॉ. विमला उपाध्याय
गोपाल रत्न गौतम पोद्दार और उनकी गोशाला 35
गुंजेश्वरी प्रसाद
नवीनतम तकनीकी विकास का लाभ ग्रामीण जनता तक पहुंचाना होगा 38
ललन कुमार प्रसाद
पशुपालन एवं दुग्ध विकास 41
डॉ. गजेन्द्र पाल सिंह
ग्रामीण रोजगार और पशुपालन 44
सुबह सिंह यादव

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो ।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें । **दूरभाष : 384888**

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुपालन की सार्थकता

□ मोहनदास नैमिशराय □

एक समय ऐसा था जब हमारे देश में पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों और वनस्पतियों से मनुष्य का अधिक से अधिक लगाव था। ये सब उसके जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे। इसलिए वह उनकी उचित देखभाल से लेकर उन सभी के विकास में गहरी रुचि लेता था। मनुष्य के मन में इनके प्रति श्रद्धा तथा आस्था थी। विशेष रूप से कृषि और पशुपालन अथवा कृषक तथा पशु का रिश्ता तो सदियों से अटूट रहा है। उनके बीच मित्रता भी ऐसी रही जिससे दोनों के जीवन की सार्थकता भी साबित हुई थी।

भारत में पशुपालन का अपना एक सार्थक इतिहास रहा है। मनुष्य के भोजन, वस्त्र, व्यवसाय और जीवन निर्वाह के साधनों के साथ आचार-विचार तथा प्रथाएं पशुधन से प्रभावित होती रही हैं। आखेट के युग की समाप्ति पर मानव ने पशुपालन पर अधिक ध्यान देना आरंभ किया था। भेड़-बकरियों के साथ-साथ गायें भी आ गईं। जंगलों में यायावरी जीवन व्यतीत करने वाले लोग एक जगह घर बसाकर रहने लगे। धीरे-धीरे गांव बनते गये और इस प्रकार एक निश्चित जीवन की शुरुआत हुई। वैसे भी आश्रमों में पशुपालन की प्रथा विद्यमान थी।

पशु की पवित्रता का वर्णन हिन्दुओं के आदि ग्रंथों में ही नहीं बल्कि बाइबिल तथा कुरान में भी मिलता है।

भगवान बुद्ध भी भेड़ को बड़ा प्यार करते थे। भगवान कृष्ण भी गायों से अति प्रेम करते थे। उन्होंने बचपन में गायें चराई थीं।

भेड़ का आर्थिक दृष्टिकोण से भी जीवन में बड़ा महत्व है। उदाहरणार्थ (1) वह हमें दूध प्रदान करती है जिससे घी, मक्खन तथा छाछ आदि निकाली जाती है। (2) उसकी ऊन से वस्त्र तैयार किये जाते हैं। यदि भेड़ न हों तो सर्दियां काटनी मुश्किल हो जायें। (3) भेड़ों का मूत्र औषधि-निर्माण के काम आता है। (4) कुछ प्राकृतिक चिकित्सकों का मत है कि भेड़ों के बीच में सोने से कभी तपेदिक की बीमारी नहीं होती। (5) मरने के बाद उसकी खाल भी काम आती है।

इसी तरह भेड़ के साथ बकरी का भी महत्व है जिसे भेड़ की चचेरी बहन कहा जाता है। बकरी का दूध बड़ा श्रेष्ठ तथा पाचक माना गया है। आयुर्वेद में इसके गुणों का बखान किया गया है। संभवतः इसीलिए गांधीजी प्रतिदिन बकरी का दूध पीते थे।

ठीक इसी प्रकार गाय और भैंस आदि का भी अपना-अपना महत्व है। गाय का देश की संस्कृति के साथ निकट का रिश्ता रहा है। अकेले गाय में इतने गुणों की प्रचुरता है कि वह संपूर्ण ग्रामीण अर्थव्यवस्था तथा उसकी आर्थिक संरचना में विशेष महत्व रखती रही है। गाय के साथ भैंस का महत्व भी कम नहीं है। इसकी उपयोगिता आज हर कोई जानता है। ऐसे ही रेगिस्तान और उसके आसपास के क्षेत्रों में ऊंट की भी उपयोगिता कम नहीं है। मुर्गीपालन और मत्स्य पालन के अपने-अपने फायदे हैं। इन दोनों से न केवल लोगों को रोजगार ही मिलता है बल्कि विदेशी मुद्रा भी प्राप्त होती है।

गांव की बेरोजगारी के अपने समीकरण हैं जो घटने के स्थान पर बढ़ते ही रहे हैं। गांव में सब कुछ है फिर भी अशिक्षित और शिक्षित युवक शहर में जाकर भटकता है। मैथिलीशरण गुप्त जी जैसे कवि ने ठीक ही कहा था, "शिक्षे, तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी।" अब किसान का बेटा "भारत भारती" नहीं पढ़ता है। नौकरी न मिलने की स्थिति में वह इधर-उधर घूमता है। गांव की चौपाल पर बैठकर महानगरों के सतरंगी सपने देखा करता है। वह अपने आपको गांव का कहलाना पसंद नहीं करता। यहां तक कि गांव में रहना नहीं चाहता। गांव की सारी संस्कृति उसके लिए अजनबी बनती चली जा रही है। वह स्वयं गांव के परिवेश तथा पर्यावरण से कोई रिश्ता नहीं रखना चाहता।

हालांकि दोष अकेले उस युवक का भी नहीं है। पढ़ा-लिखा युवक यदि गांव में है और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ खेती में लगा है, तो वह बेकार ही माना जाता है। सही बात तो यह है कि न वह स्वयं कृषि और पशुपालन आदि से जुड़ना चाहता है और न ही परिवार का मुखिया चाहता है कि उसकी तरह रात-दिन उसका बेटा भी देह तुड़वाए जबकि बदले में कुछ न पाये।

पिछले दो दशक में कृषि तथा पशुपालन के प्रति स्वयं गांव

के लोगों में उदासीनता बढ़ी है। इसी कारण खेती-बाड़ी के साथ-साथ पशुपालन का व्यवसाय भी चौपट हुआ है। जैसे-जैसे गांव शहरों के निकट आते गये या महानगरीय सभ्यता गांवों की संस्कृति, परंपरा तथा पैतृक रोजगार के साधनों को लीलती गई वैसे-वैसे ही गांवों की अर्थव्यवस्था भी डांवाडोल होती गई। गांव में उद्योग धन्धों का जाल तो फैलता गया, जिससे आसपास के परिवेश में प्रदूषण की समस्या अलग खड़ी हो गई। हरियाली ओढ़े खेतों की जमीन पर बड़े-बड़े कल-कारखाने लगा दिये गये। जहां कहीं खेत बचे वे इतने सिकुड़ गये कि लोगों की समझ से यह बाहर था कि उनका किया क्या जाए। परिणामस्वरूप जानवरों के लिए न चरागाह रहे और न अन्य कुछ।

इस संदर्भ में यहां यह बताना जरूरी है कि ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को सुधारने तथा मजबूत बनाने के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने समय-समय पर अनगिनत योजनाएं बनाईं। साथ ही बैंक की कार्य-प्रणाली से उन्हें जोड़ा। अभी तक विभिन्न योजनाओं में अनुदान राशि द्वारा वित्तीय राहत प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता था। 1988 में सर्वप्रथम हरियाणा सरकार ने ऋण राहत योजना आरंभ की। आगे चलकर 15 मई 1990 को केन्द्र सरकार द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर कृषि एवं ग्रामीण ऋण राहत योजना की घोषणा की गई।

योजना का उद्देश्य कृषि फलोद्यान, पशुपालन, दुग्ध व मुर्गीपालन, मत्स्य पालन आदि व्यवसायों को बढ़ाना था।

सरकार की एक महत्वपूर्ण योजना "समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम" के अंतर्गत ऋण प्रदान करने में ग्रामीण बैंकों की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण रही। इस योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाले लोगों को सरकार द्वारा अनुदान उपलब्ध कराया गया।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए 'अंत्योदय' कार्यक्रम देश भर में चर्चित हुए। पर उससे अधिक चर्चा रही भ्रष्टाचार और योजनाओं में गड़बड़ की। यूं गांव-गांव और कस्बे-कस्बे में गाय, भैंस, भेड़, बकरी और ऊंट आदि को पालने के लिए कर्ज बांटे गये। लेकिन कर्ज लेने से मरे जानवर को ठिकाने लगाने की चर्चा भी पिछले दशक में जोरों पर रही थी जबकि योजनाओं में कहीं गड़बड़ नहीं थी र उन योजनाओं को गांव के गरीब आदमी तक पहुंचाने का कार्य उतना सावधानी से नहीं हुआ जितना होना चाहिए था।

विशेष रुप से गाय-भैंस पालने के लिए कर्ज की राशि कम मिली या फिर कर्ज के बदले भैंस ठीक ठाक नहीं दिलाई गई। यह सब इसलिए हुआ कि कुछ लोग गरीब गांववालों के हमदर्द बनकर उसी गांव में बैंक और उनके बीच बिचौलिया भी बन गये। हालांकि कुछ लोगों के हिस्से में अच्छी और स्वस्थ भैंसे भी आईं जिससे उनकी अर्थव्यवस्था में परिवर्तन हुआ पर यह सब प्रतीक मात्र था।

देश भर में डेरी विकास योजनाएं भी आरंभ की गईं। गुजरात और महाराष्ट्र में ये सभी कार्यक्रम सफल हुए जबकि उत्तरी भारत में इसे कम सफलता मिली पर दोष योजनाओं में कहां रहा? असल में तो दोष रहा उन लोगों में जिन्होंने आम आदमी तक खुशहाली ले जाना उचित नहीं समझा। इस तरह देश भर में जहां इन्हीं योजनाओं के अंतर्गत सफलता भी मिली वहीं विफलताएं भी। दोनों पक्षों के स्वरूप को हमें भुलाना नहीं चाहिए। वह इसलिए कि हर एक गलती को भविष्य में सुधारने का अवसर मिलता है। सरकार की तरफ से दलितोद्धार के संदर्भ में जितने कार्यक्रम चले उनमें भी कहीं न कहीं आगे के लिए सुधार की गुंजाइश होती है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है गांव-गांव से बेरोजगारी दूर करने और शिक्षित तथा अशिक्षित युवकों को पशुपालन, डेरी आदि के माध्यम से खुशहाल बनाने के लिए हमारे सामने आज भी और पहले से ही ढेर सारी योजनाएं रही हैं। सरकार ने इस क्षेत्र में कुछ विशेष स्कूल, कॉलेज तथा इंस्टीट्यूट भी अनेक स्थानों पर आरंभ किये हैं। उदाहरण के लिए प्रायः हर एक राज्य में पशुओं के स्वास्थ्य का ध्यान रखने के लिए पशु चिकित्सालय भी अस्तित्व में आये हैं। साथ ही अच्छी नस्ल के पशुओं की वंश-परंपरा को बनाये रखने की प्रणाली तथा तकनीक का भी इस्तेमाल हुआ है। इस संदर्भ में सरकारी स्तर पर पशुओं के आयात-निर्यात की परंपरा भी बनी है।

यही नहीं देश में इस समय मछली पालन से संबंधित उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम चौदह संस्थानों तथा विश्वविद्यालयों में पढ़ाये जा रहे हैं। जिनके परिणामस्वरूप शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार के नये-नये अवसर भी प्राप्त हो रहे हैं।

आज युवाओं की सबसे बड़ी समस्या है रोजगार पाने की। स्वतः रोजगार से लेकर जवाहर रोजगार जैसी योजनाओं में हजारों करोड़ खर्च करने के बावजूद देश में लगभग पांच करोड़ युवा बेरोजगार हैं। सरकार के सामने आज इस अपार जनसमूह को काम देने की चुनौती है। सरकार अपने अमले के साथ जितना इस समस्या को दूर करने के लिए जूझती है उतनी ही

बेरोजगारी और बढ़ती है । गांव का युवक अपने आस पास के परिवेश में रची बसी अतुल संपदा को छोड़कर शहर की तरफ भागता है । जहां उसे न ढंग का रोजगार मिलता है और न ही पांव टिकाने को जमीन का कोई टुकड़ा । देखा जाए तो गांवों में बेरोजगारों को रोजगार दिलाने में पशुपालन सार्थक सिद्ध हो सकता है बशर्ते गांव के लोग गांव में ही रहने का मन बनायें और शहरों की ओर भागने से रुकें । विशेष रूप से राजस्थान में भेड़-बकरी पालने के लिए सरकार ने अनेक योजनाएं आरंभ की हैं । ऊंटों के पालने और उन्हें ट्रांसपोर्ट से जोड़ने के प्रयोग भी सफल हुए हैं ।

आज किसानों को खेती के साथ-साथ गाय-भैंस व भेड़-बकरी, मुर्गी, मछली पालन आदि के पालने की तरफ ध्यान देना चाहिए जिससे कि उनका दूध व अन्य आवश्यक वस्तुओं के साथ-साथ आय में भी वृद्धि हो । ग्रामीण युवकों को चाहिए कि वे पशुपालन को हेय दृष्टि से न देखें बल्कि पशुपालन के क्षेत्र में नई-नई तकनीक का इस्तेमाल करें । तब उन्हें न केवल रोजगार ही प्राप्त होगा बल्कि कृषि कार्य को भी उससे मदद मिलेगी क्योंकि कृषि तथा पशुपालन एक दूसरे के पूरक हैं । दोनों की व्यवस्था ठीक-ठाक रहने पर ही एक-दूसरे का विकास संभव है ।

सुझाव

चूंकि आज जबकि गांवों की जमीन पर अवैध कब्जे बढ़ रहे हैं साथ ही स्वयं गांव के लोग अधिक धन मिलने के लालच में अपनी जमीन बेच रहे हैं, यह सब पशुपालन के लिए रोकना होगा । क्योंकि पशुपालन, विशेषरूप से गाय-भैंस तथा भेड़-बकरी पालने के लिए चरागाह का होना अत्यंत आवश्यक है। अतः इनके विकास के लिए सरकार को बेकार पड़ी जमीन, जिस पर खेती 'अच्छी फसल' संभव नहीं है आदि को गरीब तथा भूमिहीन किसानों को वितरित करनी चाहिए । साथ ही रेडियो तथा दूरदर्शन के माध्यम से ग्रामीणों को ज्ञानवर्द्धक जानकारी भी देनी चाहिए । दूध की बिक्री के लिए दुग्ध सहकारिता को बढ़ावा देना चाहिए । आदिवासियों के मामले में वन-विभाग को उनके प्रति सहानुभूति रखनी चाहिए और उनके पशुओं को चराने के लिए अनुमति-पत्र के नियम सरल किये जाने चाहिए । शरद ऋतु में उन्हें पशुओं के लिए चारा तथा खाद्यान्न और तेल-ईंधन इत्यादि प्राप्त होने चाहिए । खादी ग्रामोद्योग को इस क्षेत्र में अपना कार्य बढ़ाना चाहिए । गांव में आवागमन के साधनों को और अधिक बढ़ाना चाहिए । क्षेत्र के आधार पर पशु-मेलों के आयोजन करने चाहिए जिससे ग्रामीणों को अपने समीप के स्थानों पर अच्छी नस्ल के पशु प्राप्त हो सकें । गांव और कस्बों में पशु चिकित्सालयों में वृद्धि कर उनका विकास करना चाहिए । बैंक से मिलने वाले कर्ज आसान शर्तों पर मिले । बैंक और ग्रामीणों के बीच कोई बिचौलिया नाम का व्यक्ति न हो ।

ऐसी परिस्थितियों में निश्चय ही ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में पशुधन महत्वपूर्ण साबित होगा । जैसे-जैसे पशुओं को पालने की परंपरा गांव तथा उसके आसपास बढ़ेगी वैसे-वैसे यह कहा जा सकता है कि गांव-गांव में हरित क्रान्ति की लहर फिर से उठेगी जो गांवों की आर्थिक स्थिति का ही नहीं बल्कि सामाजिक तथा शैक्षिक स्थिति का भी कायाकल्प करेगी । काश सरकारी योजनाओं के साथ-साथ स्वेच्छा से लोग इन कार्यक्रम को पूरा करने के लिए आगे आते जिनके माध्यम से ग्रामीण युवकों में बेरोजगारी दूर कर उन्हें रोजगार के नये-नये अवसर मिल पाते ।

बी.जी. 5-ए/30-बी
पश्चिम विहार
नई दिल्ली-110 063

ग्रामीण बेरोजगारी तथा मत्स्य पालन उद्योग

□ डॉ० गिरिजा प्रसाद दुबे □

ग्रामीण जीवन से जुड़ी अर्थव्यवस्था में कृषि एवं पशुपालन का विशेष स्थान है। ग्रामीण विकास का आर्थिक पहलू इससे पूर्णतया सम्बन्धित है। इसीलिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद-4 में यह व्यवस्था की गयी है कि "राज्य कृषि एवं पशुपालन को आधुनिक तथा वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा तथा विशेषकर गायों तथा बछड़ों और अन्य दुधारू एवं वाहक पशुओं की नस्ल के परीक्षण एवं उनका सुधार करने के लिए तथा उनके वंश को प्रतिषेध करने के लिए अग्रसर होगा।" इस प्रकार भारतीय संविधान ग्रामीण विकास से सम्बन्धित आर्थिक विकास को सामाजिक न्याय के दर्शन पर आधारित करता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या ग्रामीण जीवन स्तर को उठाकर विकास का मार्ग प्रशस्त करते हुए अपार जनशक्ति को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना है। भारत गांवों का देश है। यहां 5,70,000 गांव हैं जिनमें कुल आबादी का 76 प्रतिशत गांवों में है जिसमें 67 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में लगे हुए हैं। उत्तर प्रदेश में 77 प्रतिशत व्यक्ति कृषि करते हैं। देश के कुल निर्यात में 40 प्रतिशत कृषि क्षेत्र की सहभागीदारी है। सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का भाग 32·6 प्रतिशत और 80-81 में 38 प्रतिशत था। देश के प्रमुख वृहद् और लघु उद्योग तथा सूती वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग तथा हैण्डलूम, खांडसारी, गुड़ एवं वनस्पति तेल आदि लघु उद्योग पूर्णतया कृषि पर आधारित हैं। इसके बावजूद भी गांवों में कृषकों की दशा शोचनीय है। क्योंकि गांवों में छोटी जोत (2 एकड़ से भी कम) और खेतिहर मजदूरों की ही संख्या अधिक होती है। इसके अतिरिक्त विकास की बहुआयामी पंचवर्षीय योजनाओं के संचालन के बाद भी कृषि का बहुत बड़ा क्षेत्र आज भी असिंचित है। सिंचित क्षेत्रों में फसलोत्पादन की क्रियाएं लगभग 7-8 महीने और असिंचित क्षेत्रों में 4-5 महीने ही चलती हैं, शेष समय में ग्रामीण कृषक बेरोजगार रहते हैं।

कृषि क्षेत्र में दूसरे प्रकार की बेरोजगारी भी होती है जिसे अर्द्ध या छिपी हुई बेरोजगारी भी कहते हैं। यह बेरोजगारी कृषि क्षेत्र पर जनसंख्या के अत्यधिक दबाव के कारण उत्पन्न होती है। ऐसे व्यक्ति यद्यपि अपने को कृषि के क्षेत्र में नियोजित समझते हैं पर वहां से उनके हट जाने पर उत्पादन प्रभावित नहीं होता। ऐसे बेरोजगारों की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। एक आकलन के अनुसार 1950-51 में ऐसे बेरोजगारों की संख्या 28 लाख थी जो 1978-79 में बढ़कर 112 लाख हो गयी। छठी पंचवर्षीय योजना के अनुसार 1980 में देश में 197 लाख बेरोजगार थे जिसमें 160 लाख ग्रामीण क्षेत्रों से थे। अब इसमें और बढ़ोत्तरी हुई होगी क्योंकि श्रमशक्ति में वृद्धि की तुलना में रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं होते।

हमारी शिक्षा पद्धति का यह दोष रहा है कि पढ़ा-लिखा युवक श्रम से घृणा करता है। वह शारीरिक श्रम न कर नौकरी की तलाश में शहर की ओर पलायन करता है। अतः कृषि क्षेत्र के कुशल, अकुशल, शिक्षित-अशिक्षित सभी प्रकार के बेरोजगारों का दबाव शहर की ओर बढ़ता है। शहर अनेक प्रकार की समस्याओं को झेलते हुए इस विकराल समस्या का समाधान नहीं खोज पाता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण बेरोजगारी के कारणों के निवारणार्थ उपायों को करते हुए इस समस्या का हल स्थानीय संसाधनों और क्षेत्रीय आधार पर ढूंढा जाना चाहिए। गांधीजी भी गांवों को हर दृष्टि से स्वावलम्बी बनाना चाहते थे। इसके लिए बढ़ती आबादी की रोकथाम के उपायों के साथ ही ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों में अभिवृद्धि तथा पशुपालन और मत्स्य पालन उद्योगों पर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रस्तुत सन्दर्भ में हम मत्स्य पालन उद्योग के महत्व और सम्भावनाओं पर ही ध्यान केन्द्रित करेंगे। भारत सरकार ने आठवीं पंचवर्षीय योजना में रोजगार के सृजन की व्यापक जिम्मेदारी कृषि पर डाली है। इसके लिए कृषि क्षेत्र के प्रारूप में व्यापक परिवर्तन के साथ ही रेशम कीट पालन, मुर्गीपालन, दुग्ध उत्पादन तथा मत्स्य पालन जैसे कृषि सहायक व्यवसायों को प्रोत्साहित करके तथा कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देकर रोजगार के अतिरिक्त अवसरों के विस्तार का लक्ष्य भी रखा है।

मत्स्य पालन

इस समय मछली उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में भारत का

आठवां स्थान है । अभी हाल के वर्षों में विविध उपक्रमों तथा जापानी विशेषज्ञों की मदद से इसके उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है । इस क्रान्ति को नीली क्रान्ति (ब्लू रिवोलूशन) की संज्ञा दी जाती है । मत्स्य पालन और उत्पादन उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान करता है क्योंकि इसके द्वारा खाद्य आपूर्ति बढ़ाने, रोजगार पैदा करने तथा विदेशी मुद्रा अर्जित करने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है । मां के दूध के बाद सबसे अधिक प्रोटीन मछलियों में ही होता है । जापान और पुर्तगाल विश्व में सबसे अधिक मछली का उपभोग करने वाले देश हैं । भारत में प्रति व्यक्ति मछली का उपभोग 4 कि.ग्राम है । सबसे अधिक उपभोग करने वाले राज्य में केरल 10 कि.ग्रा. तमिलनाडु 6 कि.ग्रा. तथा पश्चिम बंगाल 4.5 कि.ग्रा. है । अनुमानकर्त्ताओं का ऐसा मानना है कि कभी ये अन्य उद्योगों के प्रतिस्थापक बन सकते हैं ।

अन्न उत्पादन एक सीमा से अधिक नहीं बढ़ सकता । अतः यह उद्योग न केवल बढ़ती हुई जनसंख्या को अति पौष्टिक खाद्य पदार्थों की आपूर्ति कर सकेगा बल्कि प्रचुर संख्या में दुर्लभ विदेशी मुद्रा के अर्जन में सहायक होकर रोजगार संवर्धन भी करेगा । इसमें गांवों एवं शहर के नीचे स्तर के लोगों के लिए स्वरोजगार अर्जन की बड़ी सम्भावनाएं हैं । आज विश्व के अनेक देशों में मछली पकड़ना और उनका व्यापार करना एक महत्वपूर्ण पेशा है । विश्व में मछली पकड़ का सालाना 37 प्रतिशत भाग जापान और उसके आस-पास के क्षेत्रों से होता है । इसके पश्चात् दूसरा स्थान ब्रिटिश द्वीप समूह और उसके आस-पास के क्षेत्रों का है जहां संसार के कुल मछली उत्पादन का 1 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है । विश्व के सम्पूर्ण मछली उत्पादन में प्रथम स्थान (44 प्रतिशत) एशिया का, द्वितीय स्थान (32 प्रतिशत) यूरोप (विघटित सोवियत राष्ट्रों सहित) का, तृतीय स्थान उत्तरी अमेरिका (7 प्रतिशत) का तथा शेष विश्व का सहभाग 17 प्रतिशत है । इस समय कुल मछली उत्पादन विश्व में 73.5 मिलियन टन है जिसमें भारत का सहभाग केवल 3 मिलियन टन है । विश्व में मत्स्य उद्योग का वैज्ञानिक प्रबन्ध और मछलियों के उत्पादन में सर्वाधिक विकसित तकनीकी जापान की है ।

मत्स्य उत्पादन के स्रोत एवं उत्पादन

भारत में मत्स्य उत्पादन के प्रमुखतः दो स्रोत प्रथम अन्तर्देशीय तथा द्वितीय समुद्र तटीय क्षेत्र माने जाते हैं । अन्तर्देशीय क्षेत्र में प्रमुख मत्स्य ग्रहण क्षेत्र एवं उनकी सहायक नदियां, तालाब, नहरें, झील एवं जलाशय आदि सम्मिलित हैं । भारत के अन्तर्देशीय क्षेत्र में 17,000 मील क्षेत्र में नदियां तथा 70,000 मील क्षेत्र में अन्य सहायक जल कुल्याएं (चैनल्स) फैली हैं । अन्तःस्थलीय स्रोतों से 1985-86 में 11.60 लाख टन मछली पकड़ी गयी । ऐसे ही 1986-87 में 12.34 लाख टन मत्स्य उत्पादन हुआ । सामुद्रिक स्रोतों के सन्दर्भ में भारत बहुत ही भाग्यशाली राष्ट्र है । इसके पास 7517 किलोमीटर लम्बा समुद्र तट है जिसमें 1985-86 में 83.561 टन मछली का निर्यात किया गया । भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद मत्स्य पालन और उत्पादन में विशेष वृद्धि हुई । मत्स्य उत्पादन और संवर्धन हेतु सरकारी प्रयास के फलस्वरूप अन्तःस्थानीय मत्स्य उत्पादन में छः गुनी वृद्धि हुई है । 1950-51 में जहां अन्तःस्थलीय स्रोत से 2.15 लाख टन तथा समुद्री क्षेत्र से 5.34 तथा 16.32 लाख टन हो गया वहां अन्य वर्षों में उत्पादन निम्नलिखित सारिणी द्वारा दर्शाया गया है :

वर्ष	आन्तरिक स्रोत	सामुद्रिक स्रोत
87-88	13.0 लाख टन	16.6 लाख टन
88-89	13.3 लाख टन	18.2 लाख टन
89-90	14.0 लाख टन	22.8 लाख टन
90-91	15.4 लाख टन	23.0 लाख टन

भारत सरकार निरन्तर प्रयासरत है कि प्रकृति प्रदत्त इस निःशुल्क और विपुल स्रोत के उत्पादन में वृद्धि की जाये । कृषि राष्ट्रीय आयोग का ऐसा अनुमान है कि सन् 2000 तक भारत में मत्स्य उत्पादन 80 लाख टन हो जायेगा जिनमें 35 लाख टन अन्तःस्थानीय क्षेत्र से तथा 45 लाख टन समुद्री क्षेत्र से होगा । मत्स्य और उससे निर्मित पदार्थों के निर्यात से भारत को विपुल मात्रा में विदेशी मुद्रा प्राप्त हो रही है । इससे प्रतिवर्ष 500-600 करोड़ विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है । इसमें लगभग 20 लाख लोगों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार उपलब्ध है । मछलियों से हमें प्रतिवर्ष लगभग 35 लाख टन पशुजनित प्रोटीन प्राप्त होता है जो हमारी जनसंख्या के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण और आवश्यक पोषक तत्व है । यही नहीं इसके अतिरिक्त शैवाल के संवर्द्धन से हमें प्रोटीन युक्त खाद मिलती है जो भारतीय कृषि की उत्पादकता वृद्धि में प्रचुर योगदान देती है ।

मत्स्य उत्पादन में वृद्धि के लिए भारत सरकार ने अनेक प्राथमिकताएं निर्धारित की हैं, इनमें से कुछ इस प्रकार हैं:-

1. मछुआरों, मछली पालकों और मत्स्य उत्पादनों को प्रोत्साहित करना ।

2. खाद्य उत्पादन बढ़ाना तथा उसके माध्यम से लोगों के पोषक स्तर को ऊंचा उठाना ।
3. रोजगार के अवसर पैदा करना ।
4. समुद्री उत्पादकों के निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित करना ।
5. पारम्परिक मछुआरों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाना ।
6. मछली की विलुप्तप्राय जातियों का संरक्षण और संवर्द्धन आदि ।

परम्परागत मछुआरों के कल्याण के लिए दो महत्वपूर्ण कार्यक्रम आरम्भ किए गए हैं :

अ. सक्रिय मछुआरों के लिए सामूहिक दुर्घटना बीमा योजना तथा

ब. मछुआरों के लिए राष्ट्रीय कोष की स्थापना ।

अन्य उपाय

ऐसा निश्चय किया गया है कि सन् 2000 तक मत्स्य पालन को हर प्रकार का प्रोत्साहन दिया जाएगा । यह भी उद्देश्य रखा गया है कि वैज्ञानिक विधि अपनाकर खारे तथा ताजे दोनों प्रकार के जल में उनके उत्पादन को सुनिश्चित किया जाय । इसके लिए मछली तथा झींगा मछली के बीज अधिक मात्रा में उपलब्ध कराने तथा घरेलू खपत और निर्यात के लिए मछलियों के उत्पादन की बुनियादी सुविधाओं में सुधार किए जाएंगे ।

वित्तीय प्रोत्साहन

इस समय देश में झींगा मछली का उत्पादन करने वाली छोटी तथा साधारण बीजशालाएं बनाने के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है । सभी श्रेणी के झींगा मछली पालकों को 30,000 रुपये प्रति हेक्टेयर की दर से नकद सब्सिडी दी जाएगी । परन्तु प्रस्तावित नकद सब्सिडी के लिए प्रति व्यक्ति जल क्षेत्र की अधिकतम सीमा 10 हेक्टेयर होगी । यह सहायता 12 हेक्टेयर के लिए उपलब्ध कराने का प्रावधान है । आठवीं योजना के अन्तर्गत 20 से 50 लाख झींगा मछली के बीज तैयार करने की वार्षिक क्षमता वाली झींगा मछली बीजशालाओं को एक लाख रुपए नकद सब्सिडी दी जाएगी । संयुक्त क्षेत्र में लघु व्यावसायिक झींगा मछली आहार उत्पादन इकाइयों की स्थापना को प्रोत्साहन देने के लिए प्रति आहार संयन्त्र एक से 5 लाख रुपये दिये जाएंगे ।

आन्ध्र प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल में 1992-93 में विश्व बैंक की सहायता से झींगा एवं अन्य मछली पालन की सात वर्ष की परियोजना आरम्भ की जा रही है । इससे करीब 9,000 परिवारों को लाभ होगा, जिनमें से अधिकतर परिवार समाज के निर्धन वर्गों के होंगे । इससे झींगा मछली का उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ एक परिवार को लगभग 25,000 रुपये की वार्षिक आय हो सकेगी । ऐसी सम्भावना व्यक्त की जा रही है कि इस परियोजना के पूर्णतया चालू हो जाने पर मछली के निर्यात-आय में प्रतिवर्ष 7 करोड़ डालर की वृद्धि हो सकती है ।

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि कृषि युग के बाद जल जंतु युग ही आएगा । इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर अमेरिका के कुछ किसान अपने कृषि फार्मों को मत्स्य फार्मों में बदलने लगे हैं । भारत जैसे देश के लिए जहां आबादी का बोझ बढ़ता ही जा रहा है, आने वाले दिनों में देश की खाद्य जरूरतें बढ़नी ही हैं परन्तु कृषि क्षेत्र से एक सीमा से अधिक उत्पादन बढ़ाना कठिन होगा । ऐसे समय में मत्स्य उद्योग अतिरिक्त खाद्य जुटाने के साथ ही रोजगार के अवसरों की वृद्धि में भी सहायक हो सकेगा, ऐसी सम्भावना है ।

32, प्राध्यापक निवास
काशी विद्यापीठ
वाराणसी

भारत में डेरी उद्योग की प्रगति एवं उपलब्धियाँ

□ गणेश कुमार पाठक □

पशुपालन उद्योग भारत का प्राथमिक उद्योग है और इसी पशुपालन उद्योग पर भारत का डेरी उद्योग आधारित है। डेरी उद्योग के अन्तर्गत दूध देने वाले पशुओं का पालन किया जाता है एवं उनसे प्राप्त दूध से ही 'डेरी उद्योग' का संचालन किया जाता है।

डेरी उद्योग की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके द्वारा भूमि पर अतिरिक्त दबाव बढ़ाए बिना ही विकास के अवसर प्राप्त किये जा सकते हैं। खास तौर से ग्रामीण विकास हेतु डेरी उद्योग मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। यही कारण है कि डेरी गतिविधि की सफल उत्पादकता को बढ़ाने हेतु भारत सरकार द्वारा एक "राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी मिशन" प्रारम्भ किया गया है।

"राष्ट्रीय डेरी विकास प्रौद्योगिकी मिशन" का मुख्य कार्य प्रचुर दुग्ध उत्पादन में, विशेषतः प्रबन्ध एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उपलब्धियां प्राप्त करना है साथ ही साथ इस मिशन का मुख्य उद्देश्य डेरी उत्पादन, ग्रामीण आय में वृद्धि करना, ग्रामीण रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना, दुग्ध व्यवसाय एवं विपणन के क्षेत्र से सभी पहलुओं की कार्यकुशलता में सुधार करना, सहकारिता डेरी क्षेत्र का विस्तार करना, संसाधनों के अधिकतर उपयोग हेतु विभिन्न कार्यक्रमों के लिए समन्वय सुनिश्चित करना है।

भारत में प्रतिवर्ष 2.5 करोड़ टन दूध का उत्पादन किया जाता है। इसका 38 प्रतिशत ताजे दूध के रूप में, 42 प्रतिशत घी बनाने हेतु एवं शेष खोया, मक्खन, पनीर दही आदि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

यद्यपि पशुओं की संख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है किन्तु दूध का उत्पादन कम होता है, जिसका मुख्य कारण यहां के पशुओं द्वारा कम दूध देना है। यही कारण है कि पूर्ण संतुलित आहार माना जाने वाला पौष्टिक तत्वों से भरपूर दूध की मात्रा भारत वासियों को बहुत ही कम प्राप्त होता है। भारत में प्रति व्यक्ति मात्र 100 ग्राम दूध ही प्राप्त होता है, जो विश्व के अन्य देशों की तुलना में बहुत ही कम है।

दुग्ध के उत्पादन को बढ़ाने हेतु स्वतंत्रता पश्चात् प्रत्येक योजना में प्रयास किया गया और तीसरी योजना में तो इस पर पूर्ण ध्यान दिया गया जिसके चलते दुग्ध उत्पादन में काफी प्रगति हुई। इसके पश्चात् दुग्ध उत्पादन को बढ़ाने के विशेष प्रयास किये गये, इसे "श्वेत क्रान्ति" की संज्ञा प्रदान की गई।

डेरी उद्योग के विकास के लिए "श्वेत क्रान्ति" को सफल बनाने हेतु निम्नलिखित प्रयास किए गये :

1. दुग्ध विकास परियोजना प्रथम

इसको आपरेशन फ्लड-1 भी कहा जाता है। इस योजना का शुभारम्भ वर्ष 1970 में 10 राज्यों में किया गया। यह योजना 1981 में समाप्त हो गई। इस योजना के तहत दुग्ध उत्पादन में वृद्धि करने के उद्देश्य से 116.6 करोड़ रुपये के निवेश से बम्बई, दिल्ली, मद्रास, कलकत्ता में 4 मदर डेरियां स्थापित की गईं एवं 7730 गांवों में तकनीकी निवेश कार्यक्रम चलाया गया।

2. दुग्ध विकास परियोजना द्वितीय

सन् 1978 में सात वर्षों की अवधि के लिए आपरेशन फ्लड-II प्रारम्भ किया गया, जिसकी समाप्ति 1985 में हुई। इस योजना के अन्तर्गत एक राष्ट्रीय दुग्ध ग्रिड का निर्माण किया गया, जिसके तहत 1 करोड़ ग्रामीण दुग्धशालाओं को उपभोक्ता केन्द्रों से जोड़ने का कार्यक्रम सम्मिलित था।

3. आधुनिक डेरियों की स्थापना

आधुनिक डेरियों की स्थापना दिल्ली, पूना, करनाल, गुण्टा, कुडमी, कोटाई कसाल एवं हरघटा (प0 बंगाल) में की गई। दुग्ध से अन्य वस्तुओं के निर्माण हेतु अमृतसर, आनन्द, मेहसाना एवं राजकोट में कारखानों की भी स्थापना की गयी।

4. पशु डेरी विकास परियोजनाओं का शुभारम्भ

विश्व बैंक की सहायता से राजस्थान, मध्य प्रदेश एवं कर्नाटक में पशु डेरी विकास परियोजनायें चलाई जा रही हैं जिसके तहत दुग्ध उत्पादन का लक्ष्य 1984-85 में 3.5 करोड़ टन से बढ़ाकर 1991-92 के लिए 5.8 करोड़ टन तक निर्धारित किया गया है।

5. दुग्ध संयंत्रों की स्थापना

डेरी उद्योग के सफल संचालन हेतु अब तक देश में 190 से भी

अधिक दुग्ध संयंत्रों की स्थापना की जा चुकी है जिसमें 94 तरल दुग्ध संयंत्र, 30 दुग्ध उत्पादक कारखाने एवं 66 प्रायोगिक दुग्ध परियोजनाएं एवं ग्रामीण डेरियां कार्यरत हैं।

6. दुग्ध विकास परियोजना तृतीय

आपरेशन फ्लड-III का प्रारम्भ दुग्ध परियोजना का तीसरा चरण है। इसके तहत मार्च 1988 तक ही 50 लाख 70 हजार किसान परिवार इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आ चुके थे एवं 49,000 डेरी सहकारी समितियों का गठन किया जा चुका था। इस कार्यक्रम का संचालन "भारतीय डेरी निगम" द्वारा किया जाता है। देश के 168 से भी अधिक दुग्ध उत्पादन क्षेत्रों में स्थित इन सहकारी समितियों से औसत रूप से प्रतिदिन लगभग 83 लाख लीटर दूध का क्रय किया जाता है।

आपरेशन फ्लड परियोजना की सबसे बड़ी उपलब्धि एक "राष्ट्रीय दुग्ध ग्रिड" का निर्माण रहा है। इस ग्रिड के अस्तित्व में आ जाने से दुग्ध संग्रह एवं वितरण के कार्य में क्षेत्रीय असमानताएं समाप्त हो गई हैं।

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड, आनन्द, मानसिंह प्रशिक्षण संस्थान, मेहसाना, गलना भाई देसाई प्रशिक्षण संस्थान, पालनपुर (बनासकेसा) एवं तीन क्षेत्रीय प्रदर्शन तथा प्रशिक्षण केन्द्रों में आपरेशन फ्लड को लागू करने वाली विभिन्न एजेन्सियों के कर्मचारियों एवं कृषकों के प्रशिक्षण हेतु सुविधायें उपलब्ध कराई गई हैं। इसका पूर्वी क्षेत्र सिलीगुड़ी में, उत्तरी क्षेत्र जालंधर में एवं दक्षिणी क्षेत्र का केन्द्र हरादें में हैं।

7. नस्ल सुधार कार्यक्रम

नस्ल सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत अच्छे नस्ल के सांड तैयार करने हेतु एक "केन्द्रीय ग्राम योजना" प्रारम्भ की गई है। जिसके तहत वर्तमान समय में देश में 625 केन्द्रीय ग्रामीण खंड कार्यरत हैं। इस समय देश में 500 क्षेत्रीय कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों के साथ 1000 उपकेन्द्र भी कार्यरत हैं। इन केन्द्रों एवं उपकेन्द्रों का मुख्य कार्य पशुओं के नस्ल में सुधार करना है, ताकि अधिक से अधिक दूध की प्राप्ति की जा सके।

8. पशु रोगों की रोकथाम हेतु उचित चिकित्सा व्यवस्था

पशुओं को रोगों से बचने हेतु देश भर में लगभग 11,200 पशु चिकित्सालयों एवं 45 सचल दवा केन्द्रों की व्यवस्था की गई है। पशु रोगों की दवाइयों के उत्पादन में भी वृद्धि की जा रही है।

9. चारा केन्द्र एवं चारा बैंकों की स्थापना

उन्नत चारे की व्यवस्था हेतु चारा केन्द्रों की एवं चारा बैंकों की स्थापना पर विशेष बल दिया जा रहा है ताकि पशुओं को प्रत्येक समय उत्तम प्रकार का चारा प्राप्त हो सके।

10. बीमा व्यवस्था

बम्बई की एक बीमा कम्पनी द्वारा महाराष्ट्र एवं गुजरात में दूध देने वाले एवं बोझ ढोने वाले पशुओं का बीमा करने की साहसिक योजना प्रारम्भ की गई है, जिसका अनुकरण कर अब बीमा कम्पनियों द्वारा पशुधन बीमा योजना का शुभारम्भ कर किया गया है।

ऋण की सुविधा

अनेक राष्ट्रीयकृत बैंक अब किसानों को अच्छी नस्ल की गाय एवं भैंसों को क्रय करने हेतु ऋण भी उपलब्ध करा रहे हैं। लघु किसान विकास एजेंसियां भी इस कार्य के लिए वित्तीय सहायता प्रदान कर रही हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब भी इसका लाभ उठाकर डेरी उद्योग के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपर्युक्त कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन से निश्चिय ही भारत में डेरी उद्योग का भविष्य उज्ज्वल है और यदि इसी तरह विकास होता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब भारत में फिर से दूध की नदियां बहने लगेंगी अर्थात् सबको दूध उपलब्ध हो सकेगा।

प्राध्यापक, भूगोल,
महाविद्यालय दूबे छपरा बलिया, बलिया
पिन 277001 (उ०प्र०)

पशु सम्पदा का विकास : सम्भावनाएं एवं चुनौतियां

□ डॉ० जी.एस. शेखावत □
□ डॉ० एम.के. जैन □

पशु-पालन कृषि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण उप-क्षेत्र है। यह लघु व सीमान्त किसानों, ग्रामीण महिलाओं और भूमि-हीन कृषि-श्रमिकों को रोजगार के लाभदायक अवसर प्रदान कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अहम् भूमिका अदा करता है। यह क्षेत्र दूध, अण्डे, मांस, ऊन, चमड़ा, खाल, पशु-विष्ठा, हड्डियां आदि भी प्रदान करता है। इतना ही नहीं पशु, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि सम्बन्धी कार्यकलापों में मदद करने के अलावा भोजन पकाने के लिए ईंधन तथा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने हेतु यातायात के साधन के रूप में अपनी सेवाएं समर्पित कर रहा है।

राजस्थान प्रदेश की भू-भौतिकीय स्थितियों में तो पशुपालन का स्थान बेजोड़ है। यहां के 11 जिले मरुस्थलीय हैं जो कुल क्षेत्रफल का 60 प्रतिशत से अधिक हैं और जिसमें 40 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। ये जिले अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में मरुस्थल में हैं। इस क्षेत्र में वर्षा न्यूनतम व अनियमित है। यही कारण है कि राज्य अक्सर सूखे व अकाल की चपेट में रहता है। यह इस तथ्य से अधिक स्पष्ट रूप से रेखांकित होता है कि गत 13 वर्षों में से, वर्ष 1983-84 को छोड़कर, शेष वर्षों में प्रदेश अकाल व सूखे से ग्रस्त रहा। इसके अलावा राज्य का एक बड़ा भाग जनजाति बाहुल्य है जिसकी आर्थिक स्थिति शोचनीय है। ऐसे सभी क्षेत्रों में जनसाधारण की आजीविका मूलतः पशुपालन पर आधारित है। यह व्यवसाय उच्च आय व अधिक रोजगार की क्षमता रखने के कारण, इन लोगों के लिए बीमे का कार्य करता है। यह इन लोगों को वर्ष-पर्यन्त रोजगार प्रदान कर फसल उत्पादन में कार्य में लगे कृषकों को आय बढ़ाने का सुअवसर प्रदान करता है। राज्य में पशुपालन का महत्व इस तथ्य से भी स्पष्ट होता है कि प्रदेश की शुद्ध घरेलू आय में इसका अंशदान 15 प्रतिशत अंकित किया गया है।

राजस्थान में 1988 की पशुगणना के अनुसार 4.09 करोड़ पशुधन है जो कि 1983 की गणना में 4.97 करोड़ था। प्रदेश में बार-बार पड़ने वाले सूखे ने राज्य की पशु सम्पदा को जो भारी क्षति पहुंचाई वह पशुओं की संख्या में इस भारी गिरावट के रूप में परिलक्षित हुई। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि इस समयावधि में भयंकर सूखे पड़े हैं जिसमें 1987-88 का सूखा इस शताब्दी का भीषणतम रहा है। इसका मुख्य प्रभाव गाय, भेड़, बकरियों पर पड़ा व इनकी संख्या में क्रमशः 19.2 प्रतिशत, 26.2 प्रतिशत तथा 18.7 प्रतिशत की कमी आई। फलतः प्रति हेक्टेयर भूमि पर 1983 में जहां 1.45 पशुओं का भार था, वह घटकर 1988 में 1.17 प्रति हेक्टेयर ही रह गया। 1988 की गणना में बकरियों की संख्या सबसे 1.26 करोड़ तथा भेड़ों की संख्या 99 लाख रही है। इस प्रकार राज्य में भेड़ व बकरी कुल पशुधन के आधे से अधिक हैं।

सम्पूर्ण भारत में, राजस्थान ही एक मात्र राज्य है जहां पशुओं की देशी नस्ल न केवल सुरक्षित है बल्कि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। प्रदेश की अति दुधारू, गिर, राठी एवं थारपारकर गायें, उत्तम कार्यक्षमता वाले नागौरी व मालवी बैल, दुग्ध उत्पादन में उत्तम मुर्रा भैंस, दुधारू अलवरी व सिरोही बकरियां तथा मांस वाले मारवाड़ी व लोही बकरे, ऊन के लिए चौखला व सोनाड़ी भेड़ें तथा मांस के लिए प्रसिद्ध मारवाड़ी, जैसलमेरी व मालपुरी भेड़ें तथा सवारी और बोझ ढोने योग्य जैसलमेरी व बीकानेरी ऊंट देश-विदेश में मशहूर हैं।

भारत की कुल पशु सम्पदा में, राजस्थान सबसे अधिक धनाढ्य है। देश के कुल दुग्ध उत्पादन में 10 प्रतिशत, बकरे के मांस में 30 प्रतिशत एवं ऊन उत्पादन में 40 प्रतिशत अकेले राजस्थान का हिस्सा है। साथ ही भारत की सम्पूर्ण पशुधन शक्ति का लगभग 35 प्रतिशत इसी राज्य में उपलब्ध है। इस विशाल पशुधन सम्पदा से 1980-90 के दशक में प्रदेश का मुख्य अनुमानित उत्पादन निम्नलिखित रहा है :

वर्ष	ऊन उत्पादन (लाख किलो में)	दुग्ध उत्पादन (लाख टन में)	मांस उत्पादन (हजार टनों में)
1980-81	132	33	14
1984-85	156	35	15
1990-91	160	43	24

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि पिछले एक दशक में पशु

उत्पादों–ऊन, दुग्ध व मांस में क्रमशः वास्तविक वृद्धि लगभग 21 प्रतिशत, 30 प्रतिशत तथा 71 प्रतिशत रही।

अब हम राज्य में योजनाकाल में सरकार द्वारा पशुपालन के संवर्द्धन व उत्पादकता वृद्धि से सम्बन्धित जिन प्रमुख कार्यक्रमों को अपनाया गया है, उनका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगे ताकि इनका सार्थक मूल्यांकन प्रस्तुत किया जा सके।

चिकित्सा सेवायें

राजस्थान में पशुओं की स्वास्थ्य रक्षा के लिए न केवल पशु चिकित्सालयों की स्थापना कर रोगी-पशुओं को विभिन्न चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध करवाने का प्रयास किया गया है बल्कि संक्रमक रोगों से बचाव के लिए टीकाकरण कार्यक्रम, जनन-रोग की चिकित्सा तथा बन्ध्याकरण जैसे कार्यक्रम भी शुरू किये गये हैं।

(अ) राज्य में पशु स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्ध कराने की दृष्टि से पशु चिकित्सालयों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि की गई है। 1950-51 में इनकी संख्या 147 थी जो अब बढ़कर वर्तमान में 1338 हो गई है। इनमें 988 चिकित्सालय व 350 औषधालय हैं। पशुपालकों को उनके रोगी-पशुओं के लिए विशेषज्ञों की बहु-उद्देशीय चिकित्सा सेवाएं एक ही स्थान पर सुलभ कराने के उद्देश्य से प्रदेश में 8 पॉलीक्लिनिक चिकित्सालय भी खोले गये हैं जो एक ही छत के नीचे पशुओं को विभिन्न रोगों से बचाव, उत्पादन कार्यक्रम व अन्य सेवायें उपलब्ध करने में अपनी महती भूमिका निभा रहे हैं। इनमें पशुपालकों की सुविधा के लिए औषधि व शल्य चिकित्सा केन्द्र, औषधि वितरण व उत्पादन तथा अन्य रोग निदान सेवायें मुख्य रूप से उपलब्ध करवायी जा रही हैं।

उपरोक्त के अतिरिक्त 55 पशु-चिकित्सा इकाइयां कार्य कर रही हैं जो मुख्यतः पशुओं में प्रजनन-व्याधि और शल्य-चिकित्सा एवं इससे सम्बन्धित बीमारियों को दूर करने के लिए घर-घर जाकर अपनी सेवायें उपलब्ध करवाती हैं। इसके साथ ही, ये इकाइयां समय-समय पर गांवों में महामारी के बचाव एवं पशु चिकित्सा शिविरों में भी अपनी सेवायें प्रदान करती हैं।

(ब) टीकाकरण

पशुओं के स्वास्थ्य संरक्षण की दृष्टि से उन्हें संक्रामक रोगों के प्रकोप से बचाने के लिए टीकाकरण का एक वृहत कार्यक्रम प्रदेश भर में चलाया जा रहा है। पशुओं में पशुमाता महामारी से बचाव के लिये 1958 से पशुमाता टीकाकरण कार्य शुरू किया गया और वर्तमान में कोई भी पशु इस रोग से ग्रस्त नहीं है। मुंह और खुरपका रोग की रोकथाम हेतु भारतीय अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के सहयोग से 1976-77 से इसके टीकाकरण का कार्य चल रहा है। ऊंटों को प्राणघातक सर्रा रोग से बचाने के लिए ऊंट-बाहुल्य क्षेत्रों में सर्रा-नियन्त्रण इकाइयों की स्थापना की गई है। इनमें ऊंटों के खून का परीक्षण कर चिकित्सा की जाती है व कीटनाशक दवाओं का छिड़काव किया जाता है।

विभिन्न प्रकार के रोगों की रोकथाम के लिए रोग-निरोधक टीकों के उत्पादन के लिए जयपुर में प्रादेशिक स्तर पर एक जैविक उत्पादन प्रयोगशाला जामडोली में कार्य कर रही है। यहां विभिन्न प्रकार के टीकों के उत्पादन के अलावा कुछ टीकों का आयात तथा पड़ोसी राज्यों की मांग के अनुरूप उनका निर्यात भी किया जाता है।

(स) बांझ निवारण

राज्य में प्रजनन योग्य मादा पशुओं में करीब 50 प्रतिशत मादा जनन-रोग से ग्रसित हैं। इनकी आवश्यक चिकित्सा के बाद इन्हें गर्भधारण करने लायक बनाया जा सकता है। इस हेतु प्रदेश में वर्तमान में करीब 35,000 पशुओं को प्रतिवर्ष बांझपन निवारण की चिकित्सा उपलब्ध करवायी जा रही है।

(द) बन्ध्याकरण

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ऐसे पशु जो बेकार हो गये हैं उनका बन्ध्याकरण कर दिया जाता है ताकि दूसरे पशुओं की नस्ल खराब न हो।

वर्ष 1991-92 के दौरान दिसम्बर 1991 तक 50.42 लाख पशुओं का विभिन्न रोगों की रोकथाम के लिए टीकाकरण किया गया तथा 52.47 लाख पशुओं की चिकित्सा की गई, 6.96 लाख नकारा पशुओं का बन्ध्याकरण किया गया तथा राज्य की टीका उत्पादन इकाई में 128.34 लाख विभिन्न प्रकार के टीकों की खुराक का चालू वर्ष में उत्पादन किया गया।

नस्ल सुधार

पशु संवर्द्धन का सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम नस्ल सुधार से सम्बंधित है। राजस्थान में इस हेतु कृत्रिम गर्भाधान तथा स्वाभाविक प्रजनन दोनों ही विधियों को प्रयुक्त किया जा रहा है।

अच्छे व उन्नत नस्ल के सांडों की विशुद्ध संतति उत्पादन के लिए कृत्रिम गर्भाधान प्रणाली एक वैज्ञानिक, सरल एवं सुलभ उपाय है। इसके लिए प्रदेश में 1956 से नस्ल वीर्य द्वारा कृत्रिम गर्भाधान शुरू किया गया था लेकिन चूंकि तरल एवं स्वाभाविक तापमान में रखे गये वीर्य द्वारा गर्भाधान की विधि अधिक वैज्ञानिक नहीं थी। अतः इसमें सफलता नहीं मिली।

यहां यह तथ्य ध्यान रखने योग्य है कि राज्य के पश्चिमी

भू-भाग में पशुपालक अधिकतर घुमक्कड़ प्रवृत्ति के हैं । गांव भी दूर-दूर स्थित हैं तथा दूर-दराज के क्षेत्रों में कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा देना सम्भव नहीं है । वर्ष 1991 के दौरान दिसम्बर 1991 तक 6 लाख के लक्ष्य के मुकाबले 3 लाख पशुओं में कृत्रिम गर्भाधान किया गया । इसी प्रकार, 6 हजार के लक्ष्य के पीछे दिसम्बर 1991 तक 5000 पशुओं का प्राकृतिक गर्भाधान किया गया ।

चारा उत्पादन

पशुधन की उत्पादकता बनाये रखने एवं इनमें वृद्धि करने के लिए पौष्टिक एवं समुचित आहार आवश्यक है । समस्त प्रजनन योजनायें भी बिना उचित आहार व्यवस्था के सफल नहीं हो सकती । राजस्थान में उन्नत किस्म के चारा उत्पादन के लिए अच्छे बीजों की प्राप्ति हेतु 158 एकड़ क्षेत्र में 6 बीज खण्डों के अन्तर्गत ऐसे बीजों का उत्पादन किया जा रहा है । इन बीजों का वितरण पशुपालकों में बिना लाभ व बिना हानि के कर दिया जाता है ।

एक अन्य कार्यक्रम के अन्तर्गत पशुपालकों की भूमि पर उन्नत किस्म के चारा प्रदर्शन की व्यवस्था भी की गई है ताकि पशुपालक स्वयं फसलों के उत्पादन व उसकी उपयोगिता को परख सकें और भविष्य में उच्च उत्पादन के लिए प्रेरित हो सकें । इसके लिए बीजों का वितरण निःशुल्क किया जाता है किन्तु खाद व पानी पर होने वाला खर्च किसान वहन करता है । राज्य में वर्तमान में 400 क्विंटल चारा-बीजों की आवश्यकता के लिए 300 क्विंटल का ही उत्पादन किया जा रहा है । शेष आवश्यकता की पूर्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है । पर्यावरण को प्रदूषित होने से रोकने के लिए एवं साथ ही पशुओं के लिए पौष्टिक चारा उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से वृक्षारोपण का कार्य भी किया जा रहा है और प्रतिवर्ष करीब ऐसे 50-60 हजार वृक्ष लगाये जा रहे हैं ।

विपणन व्यवस्था

पशुपालकों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये यह जरूरी है कि उन्हें उनके पशुओं तथा पशु उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त हो । राज्य में एक ओर जहां पशुओं के क्रय-विक्रय हेतु पशु-मेलों का योगदान उल्लेखनीय है, वहीं दूसरी ओर पशु-उत्पादों को बिना मध्यस्थों के सीधे ही उपभोक्ता तक पहुंचाने में सहकारी समितियों की भूमिका को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता ।

प्रदेश में पशु-मेलों का आयोजन नगर पालिका, नगर-परिषदों, ग्राम पंचायतों व समितियों द्वारा किया जाता है । वर्तमान में 10 राज्य स्तरीय मेलों सहित कुल 250 पशु मेलों का आयोजन प्रतिवर्ष किया जाता है । इन मेलों में पशुपालकों को निःशुल्क पानी, आवास, चिकित्सा व रोशनी की सुविधायें उपलब्ध करवायी जाती हैं । इनसे जहां राज्य सरकार को बिक्री-कर से करीब 50 लाख रुपये की आय प्राप्त होती है, वहीं पशुपालकों को प्रति वर्ष 40-50 करोड़ रुपये के क्रय-विक्रय का लाभ मिलता है ।

इसी भांति राज्य में दूध का विक्रय, दुग्ध-उत्पादक सहकारी समितियों के माध्यम से करने पर जोर दिया गया है । राजस्थान सहकारी डेरी फेडरेशन लिमिटेड, राज्य में राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड के सहयोग से दुग्ध विकास कार्यक्रम सहकारिता के आधार पर कार्यान्वित कर रहा है । डेरी फेडरेशन का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं को अच्छे किस्म का दूध एवं दूध से उत्पन्न अन्य सामग्री उपलब्ध करवाना, पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार तथा पशु-आहार सुविधा के साथ उत्पादकों को दूध का उचित मूल्य दिलाना है । जनवरी 1992 के अन्त तक राज्य में 10 दुग्ध संयन्त्र, जिनकी क्षमता 9 लाख लीटर प्रति दिन दुग्ध-विदोहन और 24 दुग्ध अवशीतन संयन्त्र, जिनकी क्षमता 4 लाख लीटर दूध अवशीतन प्रतिदिन है, कार्यरत हैं ।

राज्य में दुग्ध-उत्पादक क्रियाशील समितियों की संख्या दिसम्बर 1991 के अन्त तक 3199 व सदस्य संख्या 3.5 लाख थी । अप्रैल से दिसम्बर 1991 के दौरान प्रति दिन औसत दुग्ध एकत्रीकरण क्षमता 2.55 लाख लीटर रही जबकि 1989-90 में 4.15 लाख लीटर थी । दुग्ध सहकारी समितियों के अधीन पशुओं को पशु-आहार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से फेडरेशन के पशु-आहार संयन्त्रों द्वारा 29,190 मीट्रिक टन पशु-आहार उत्पादित किया गया और सदस्यों में उसका वितरण किया गया । इस प्रकार सहकारी समितियों के विकास के फलस्वरूप उत्पादन को विपणन के साथ जोड़ा जा सका है और दुग्ध-उत्पादकों को मध्यस्थ वर्ग के शोषण से मुक्ति मिल सकी है ।

भेड़ पालकों को ऊन के विपणन में मदद करने के लिए राज्य स्तर पर राजस्थान राज्य सहकारी भेड़ व ऊन विपणन फेडरेशन लिमिटेड, 1977 से कार्यरत हैं । इसका मुख्य उद्देश्य भेड़ ऊन के वाणिज्यिक विकास में सहयोग देना है । इसकी स्थापना सहकारी क्षेत्र में की गयी है । यह भेड़ों की बिक्री की व्यवस्था भी करता है । राज्य की आठवीं योजना में इस फेडरेशन के लिए 25 लाख रुपये प्रस्तावित हैं ।

अब राष्ट्रीय ऊन-विकास बोर्ड भी राज्य की सबसे बड़ी ऊन मण्डी बीकानेर में एक ऊन-परीक्षण प्रयोगशाला तथा ब्यावर में चिकनी ऊन की धुलाई का संयन्त्र लगाने जा रहा है। इस बोर्ड की एकीकृत भेड़-ऊन विकास परियोजना में पश्चिमी राजस्थान के पांच जिलों से 10 गांवों का चयन किया गया है। बोर्ड की बीकानेर स्थित प्रयोगशाला में ऊन की किस्मों की जांच व ग्रेडिंग भी की जायेगी जिससे उत्पादक व व्यापारी दोनों लाभान्वित होंगे।

"गोपाल" — एक अभिनव कार्यक्रम

राज्य के पशुधन को उन्नत करने में ग्रामीण युवकों की भागीदारी को सुनिश्चित बनाने के लिए राज्य सरकार ने 1989-90 में दक्षिण पूर्वी राजस्थान के 10 जिलों में "गोपाल-योजना" शुरू की। इस योजना के अन्तर्गत चयन समिति द्वारा चयनित स्थानीय युवकों को तीन माह तक कृत्रिम गर्भाधान, बंध्याकरण, उपचार एवं उन्नत-चारा उपयोग आदि का विस्तृत प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके बाद, इन युवकों को उनके ग्रामीण क्षेत्र में निकटतम पशु-चिकित्सक की गहन देख-रेख में लगाया जाता है। वहां उन्हें सरकार की ओर से आवश्यक उपकरण, हिमकृत वीर्य एवं तरल नाइट्रोजन आदि निःशुल्क उपलब्ध करवाये जाते हैं। प्रत्येक युवक द्वारा पशु-संवर्द्धन का कार्य उनके स्वयं के गांव की 8 किलोमीटर की परिधि में सम्पादित किया जाता है। इन युवकों को ही "गोपाल" नाम दिया गया है।

इस प्रकार "गोपाल कार्यक्रम" द्वारा ग्रामीण शिक्षित युवकों को उनके गांव में रोजगार उपलब्ध करवाकर उनके साथी पशु-पालकों को पशुधन विकास में सहयोग प्रदान किया जा रहा है। दिसम्बर 1991 तक ऐसे 258 गोपाल-युवकों को प्रशिक्षित कर 15,770 कृत्रिम गर्भाधान व 18,856 बंध्याकरण के कार्य किये गये हैं। राज्य सरकार द्वारा हाल ही में विश्व बैंक को, जो 437 लाख रुपये की योजना प्रस्तुत की गयी है, उसमें इस कार्यक्रम के विस्तार के लिए 182 लाख रुपये रखे गये हैं।

प्रशिक्षण

पशुपालन से सम्बंधित तकनीक में प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से वर्तमान में 4 पशु-पालन प्रशिक्षण विद्यालय-जयपुर, कोटा, जोधपुर व उदयपुर में कार्य कर रहे हैं। इनमें पशुधन सहायकों को एक वर्ष का प्रशिक्षण दिया जाता है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में, इन विद्यालयों में प्रजनकों (Breeders) को भी प्रशिक्षण देने का प्रस्ताव है। इतना ही नहीं, जिला स्तर के पशुपालन अधिकारियों व सहायक निदेशकों को भी प्रशिक्षित करने की कल्पना इस योजना में की गई है और सम्पूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए 56 लाख रुपये रखे गये हैं।

इसी वर्ष राज्य सरकार की ओर से विश्व-बैंक को पशुपालन विकास हेतु योजना के अन्तर्गत, इन विद्यालयों के सुदृढ़ीकरण के लिए 50 लाख रुपये का प्रावधान किया गया है। इसी योजना में 30 लाख रुपये की लागत से एक "राजस्थान प्रबन्ध संस्थान" भी खोला जाना प्रस्तावित है। इस संस्थान में पशुपालन एवं सम्बन्धित विभागों के कर्मचारियों को, संयुक्त प्रशिक्षण दिया जायेगा। विश्व-बैंक महिला कृषकों के प्रशिक्षण सहित, मानव-संसाधन विकास के कार्यक्रम भी, इस योजना के अन्तर्गत, संचालित करेगा जिसके लिए 60 लाख रुपये रखे गये हैं। इसी कार्यक्रम के अन्तर्गत, सम्भागीय मुख्यालयों प्रबन्ध-सूचना प्रणाली (MIS) को शुरु किये जाने का प्रस्ताव है। कार्यक्रम का एक अन्य आकर्षक पहलू 4 नये जिलों में तकनीकी प्रशिक्षण की व्यवस्था शुरू किया जाना है जिस पर 46 लाख रुपये खर्च होने का अनुमान है। इस प्रकार उपरोक्त चारों प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर कुल का 42.6 प्रतिशत व्यय किया जायेगा।

अनुसंधान

पशुओं में व्याप्त रोगों के संदर्भ में अनुसंधान कर, कारणों का पता लगाने के उद्देश्य से क्षेत्रीय स्तर पर जयपुर जिले के बस्ती केन्द्र में 1964 में क्षेत्रीय पशुधन अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की गयी। इस केन्द्र की प्रजनन-शाखा, पोषाहार-शाखा एवं पशु-विकृति विज्ञान-शाखा, पशुपालन सम्बंधित अन्वेषण व अनुसंधान कार्य में संलग्न हैं। पशुओं में खुर एवं मुंहप रोग के अनुसंधान हेतु जयपुर में एक अलग इकाई कार्य कर रही है। ऊंट में सर्रा रोग अनुसंधान हेतु जोधपुर में एक प्रयोगशाला 1978-79 से कार्य कर रही है।

राष्ट्रीय स्तर के विशिष्ट पशु रोगों के व्यवस्थित नियंत्रण हेतु केन्द्र प्रवर्तित योजना के तहत पशुओं में क्षय-रोग व ब्रुसेलिसिस बीमारी की रोकथाम हेतु जयपुर, कोटा व उदयपुर में एक-एक इकाई तथा रेबीज रोग की रोकथाम हेतु अजमेर व जयपुर में एक-एक इकाई की स्थापना की गयी।

आठवीं पंचवर्षीय योजना एवं पशुपालन

राजस्थान की आठवीं पंचवर्षीय योजना में पशुपालन के लिए कुल 85 करोड़ रूपये के व्यय का प्रस्ताव किया गया है। सातवीं योजना का वास्तविक व्यय मात्र 37.6 करोड़ रुपये था। आठवीं योजना के कुल व्यय का 50 प्रतिशत से अधिक पशु-चिकित्सा व स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च करने का प्रस्ताव है। इस

व्यय का भी करीब 60 प्रतिशत वर्तमान पशु-चिकित्सा संस्थाओं के रख-रखाव तथा उनमें और सुविधाओं की वृद्धि पर ही खर्च हो जायेगा । योजना में 30 करोड़ रुपये पशु व भैंस विकास कार्यक्रम के लिए रखे गये हैं । इसके अन्तर्गत, "गोपाल" कार्यक्रम, नस्ल-सुधार, चारा-विकास व कृषकों के प्रशिक्षण आदि कार्यक्रम आते हैं । शेष व्यय मुर्गी-विकास, प्रशासन, विस्तार व प्रशिक्षण आदि कार्यक्रमों पर किया जायेगा ।

उपरोक्त विवेचन के बाद, अब हम निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत, राजस्थान में पशुपालन की कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं पर चर्चा करेंगे ।

वित्तीय संसाधनों का अभाव

राजस्थान के पशुपालन कार्यक्रमों के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन कार्यक्रमों के लिए धन का अभाव शुरू से ही रहा है । राज्य की शुद्ध आय में, अर्थव्यवस्था के किसी भी एक उपक्षेत्र का इतना अधिक योगदान नहीं है जितना कि पशुपालन का । वर्तमान में यह 15 प्रतिशत है । इसके बावजूद लगता है कि हमारे योजना निर्माताओं की यह आखिरी पसन्द है । प्रथम योजना से सातवीं योजना तक का विश्लेषण करने पर मालूम होगा कि पशुपालन को, कुल योजना आवंटनों का मात्र एक प्रतिशत के लगभग ही प्राप्त हुआ है । आठवीं योजना में तो, जो कि 11,500 करोड़ रूपये की है, पशुपालन के कार्यक्रमों के लिए कुल 85 करोड़ रुपये ही रखे गये हैं जो कि कुल योजना व्यय का मात्र 0.74 प्रतिशत है ।

अतः आज जरूरत इस बात की है कि राजस्थान सरकार व योजनाकार इस क्षेत्र के महत्व को पहचानें और अकाल व सूखे से पीड़ित राज्य की अर्थव्यवस्था में, इस क्षेत्र की उच्च आय व रोजगार की सम्भावनाओं को देखते हुए विकास की सभी योजनाओं में इसे सर्वोच्च प्राथमिकता दें तथा योजना राशि कम से कम 15 प्रतिशत इस क्षेत्र के लिए अवश्य रखें ।

स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव

प्रदेश में अनेक पशु अलग-अलग बीमारियों से ग्रसित रहते हैं जिनके प्रमुख कारणों में असंतुलित भोजन, हरे चारे का अभाव व अनार्थिक पशुओं को खुला छोड़ा जाना आदि प्रमुख हैं । इनके लिये चिकित्सा सुविधायें भी राज्य में न्यूनतम मात्रा में ही उपलब्ध हैं । 4 करोड़ पशुओं के लिये मात्र 1400 चिकित्सा संस्थान हैं और इनमें भी चिकित्सकों व आवश्यक उपकरणों का अभाव है ।

यद्यपि प्रदेश में पशुपालन विभाग ने प्रत्येक 10 किलोमीटर पर अथवा 10 हजार पशुओं पर एक चिकित्सा संस्थान उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा है लेकिन सीमित वित्तीय साधनों व अन्य प्राथमिकताओं के कारण यह एक स्वप्न ही रह गया है ।

आज आवश्यकता इस बात की है कि राज्य में भ्रमणशील चिकित्सा इकाइयों की संख्या तीव्र गति से बढ़ायी जाये । वर्तमान में इनकी संख्या मात्र 55 है। इनसे दूरस्थान के क्षेत्रों में रहने वाले पशुपालकों को उनके निवास स्थान पर ही पशु चिकित्सा की विशिष्ट सेवायें प्रदान की जा रही हैं। ये इकाइयां विभिन्न स्थानों पर पशुशल्य चिकित्सा एवं बांझ निवारण शिविरों का आयोजन कर पशुपालकों को सुविधायें उपलब्ध करा रहीं हैं ।

चारे की कमी

राजस्थान प्राकृतिक दृष्टि से एक ऐसा प्रदेश है जो अपने में अनेक भौगोलिक विषमताओं को संजोये हुए है । यहां एक और पहाड़ी व वर्षा-बाहुल्य क्षेत्र हैं तो दूसरी ओर मैदानी रेगिस्तान व शुष्क क्षेत्र हैं । दोनों ही प्रकार के क्षेत्रों में चारा उत्पादन भिन्न है । अनेक प्रकार का चारा व दाना जो पशुओं को दिया जाता है, वह अपूर्ण, असंतुलित व आवश्यक पोषक तत्वों से हीन है जिससे कुपोषण के कारण पशुओं में कई प्रकार के रोग हो जाते हैं और उनका पूर्ण विकास नहीं हो पाता ।

इस विशाल पशु सम्पदा को कुपोषण से बचाने के लिये राज्य में मात्र एक प्रयोगशाला बस्सी में है जहां गांवों व शहरों से तथा पशु प्रजनन फार्मों से दाने व चारे के नमूने लाकर उनकी पौष्टिकता का विश्लेषण किया जाता है और आवश्यक सुधारात्मक परामर्श दिये जाते हैं । इतना ही नहीं राज्य में चारा विकास योजना के अन्तर्गत पशु पालन विभाग के पास चारा-बीज उत्पादन हेतु मात्र 158 एकड़ भूमि है जिसमें से 55 एकड़ सिंचित व 103 एकड़ असिंचित है । अतः राज्य में चारा उत्पादन के लिये राज्य सरकार द्वारा सिंचित भूमि पर कारगर उपाय करने की आवश्यकता है ।

अनार्थिक व बेकार पशुओं की समस्या

राजस्थान में लगभग आधे पशु ऐसे हैं जिनकी उत्पादकता इतनी कम है कि वे अपने स्वामी के लिये आर्थिक दृष्टि से अनुपयोगी हो गये हैं । इससे पशु पालन व्यवसाय में विपरीत असर पड़ता है । नस्ल सुधार कार्यक्रम के द्वारा इस समस्या पर काबू पाने का प्रयास किया गया है किन्तु इस दिशा में किये गये प्रयास पशुओं की विशाल संख्या को देखते हुए नगण्य ही रहे हैं ।

सहकारिता का सीमित होना

राज्य में सहकारिता का विकास केवल दुग्ध उद्योग तक ही सीमित रहा है। इसमें भी पड़ोसी राज्य गुजरात व महाराष्ट्र की जैसी सहकारिता संस्कृति को उत्पन्न करने में हम असफल रहे हैं। अन्य पशु उत्पादों व पशुओं के सन्दर्भ में तो इस भावना का नितान्त अभाव ही पाया जाता है। अतः भविष्य में सरकार व अन्य ऐच्छिक संस्थाओं के माध्यम से इन क्षेत्र में लगे लोगों में सहकारिता का प्रसार कर उन्हें जागरूक बनाना होगा।

शिक्षा व प्रशिक्षण का अभाव

राज्य में शिक्षा का स्तर अत्यन्त निम्न है। 1991 की जनगणना के अनुसार केवल 38.8 प्रतिशत व्यक्ति ही साक्षर हैं। इसमें भी स्त्री साक्षरता की स्थिति और भी दयनीय है। यह अधिक महत्वपूर्ण इसलिये है कि पशुपालन के व्यवसाय में मूलतः महिलायें ही लगी हुई हैं। जनगणना के अनुसार मात्र 20.8 प्रतिशत महिलायें ही साक्षर हैं। इनमें भी ग्रामीण महिलाओं में तो शिक्षा का नितान्त अभाव है।

ऐसी स्थिति में पशुपालकों को पशुपालन की वैज्ञानिक विधियों की जानकारी नहीं हो पाती और जानकारी हो भी जाये तो इन्हें अपनाने के लिये वे तुरन्त तत्पर नहीं होते। पशुओं के नस्ल सुधार कार्यक्रम से तो ये पूर्ण अनभिज्ञ होते हैं। इसी प्रकार राज्य में ऐसी किसी सुदृढ़ प्रशिक्षण व्यवस्था का अभाव है जिसके अन्तर्गत वृहत् स्तर पर पशुपालकों को ग्रामीण आधार पर प्रशिक्षण दिया जा सके।

वैसे पशुपालन के सभी क्षेत्रों की मुख्य समस्याओं को न्यूनाधिक मात्रा में हल करके इन्हें अधिक उत्पादक, आधुनिक व कार्यकुशल बनाने की आवश्यकता है ताकि इनमें संलग्न लाखों ग्रामीण पशुपालकों की आय, रोजगार व पोषण-स्तर में उचित वृद्धि की जा सके।

बी-53, यशपथ
तिलक नगर
जयपुर-302004

राजस्थान के पशु मेले

☐ प्रभात कुमार सिंघल ☐

राजस्थान में पशुओं की खरीद-फरोक्त के लिए बेहतर सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए पशुपालन विभाग विविध प्रकार के प्रयास करता है। पशु मेले भी इसका एक बड़ा माध्यम हैं। प्रदेश में वर्ष भर में करीब 250 से अधिक पशु मेलों का आयोजन नगर परिषद्, नगर पालिका, पंचायत समिति एवं पंचायतों द्वारा किया जाता है। विभाग द्वारा 10 बड़े पशु मेले लगाये जाते हैं। एक अनुमान के अनुसार इन मेलों से राज्य को प्रतिवर्ष लगभग 16 लाख रुपये की आय खन्ना से तथा 40 लाख रुपये की आय बिक्रीकर के रूप में होती है। पशुपालकों को भी पशुओं के क्रय-विक्रय से 40 से 50 करोड़ रुपये की आय होती है।

राज्यस्तरीय प्रमुख पशु मेले :

वीर तेजाजी पशु मेला परबतसर (नागौर), श्री कार्तिक पशु मेला पुष्कर (अजमेर), श्री चन्द्रभामा पशु मेला, झालरापाटन (झालावाड़), श्री रामदेव पशु मेला, नागौर, श्री मल्लीनाथ पशु मेला, तिलवाड़ा, श्री महाशिवरात्रि पशु मेला, करौली (सवाई माधोपुर), श्री गोगामेड़ी पशुमेला, (श्रीगंगानगर), श्री गोमती सागर पशु मेला, मेड़ता शहर (नागौर), श्री बलदेव पशुमेला, मेड़ता शहर (नागौर), श्री जसवंत प्रदर्शनी एवं पशु मेला, (भरतपुर)।

सूचना एवं जनसंपर्क अधिकारी
कोटा-324001 (राज.)

ग्रामीण विकास का आधार पशु पालन

☐ प्रभात कुमार सिंघल ☐

सभ्यता के विकास क्रम में प्रारंभिक युग में कृषि ही प्रमुख व्यवसाय बना। शनैः शनैः आवश्यकताओं के अनुरूप पशु पालन इससे संबंधित व्यवसाय बना। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशु पालन व्यवसाय का आज भी विशेष महत्त्व बना हुआ है। पशुपालन की आवश्यकता ने रोजगार के भी नये मार्ग प्रशस्त किये। पशु चिकित्सा का महत्त्व बढ़ा। पशु आहार के नये नये उत्पाद सामने आये। पशुधन के विकास एवं संवर्धन के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में विशेष आर्थिक प्रावधान किये जाने लगे। पशु पालन पर दुग्ध परियोजनाएं बनीं। डेरी व्यवसाय को प्रोत्साहन मिला एवं वर्तमान समय में इसमें मेकेनाइज पद्धति ने अपना प्रभाव बढ़ाया। इन सभी संदर्भों में हम एक नजर डालते हैं। राजस्थान में पशु पालन के विकास एवं इससे जुड़े रोजगार क्षेत्रों में क्या-क्या कदम उठाये गये हैं और भावी कार्यक्रम क्या हैं ?

मरुस्थलीय प्रदेश राजस्थान जहाँ लगभग 55 प्रतिशत क्षेत्रफल रेगिस्तानी है, काफी बड़ा क्षेत्रफल पहाड़ी है, सिंचाई के साधन अपर्याप्त हैं तथा पहाड़ी क्षेत्रों में जहां अनुसूचित जाति एवं जनजाति के काश्तकारों पर ढलवा खेती की छोटी-छोटी जमीनें हैं, ऐसे में विशेषकर मरुस्थलीय क्षेत्रों में बहुसंख्यक जन समुदाय की आजीविका पशु पालन पर निर्भर करती है। राज्य की 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि एवं पशुपालन से जुड़ी है।

राजस्थान में उपलब्ध पशुधन देश का 11 प्रतिशत है। वर्ष 1988 की जनगणना के अनुसार राज्य में 409 लाख पशु पाये जाते हैं। कुक्कुट संपदा 22 लाख से अधिक है। एक अनुमान के अनुसार राज्य में 36,000 टन दूध वार्षिक, 17.50 टन मांस तथा 1750 लाख अण्डों का वार्षिक उत्पादन होता है। पशुधन से राज्य को 18 प्रतिशत से अधिक आय होती है। राज्य में भेड़ों से करीब 16,000 टन वार्षिक से अधिक ऊन का उत्पादन होने का अनुमान है।

राजस्थान में गायों की राठी, थारपारकर, गीर, हरियाणा, कांकरेन, नागौरी एवं मालवी नस्लें पाई जाती हैं। बीकानेर एवं श्रीगंगानगर जिले में पायी जाने वाली राठी नस्ल की गाय दुग्ध उत्पादन के लिए देश की सर्वोत्तम नस्लों में से है। थारपारकर नस्ल जैसलमेर, जोधपुर एवं बाड़मेर जिलों में पाई जाती है। मीर नस्ल की गायें अजमेर, भीलवाड़ा, उदयपुर एवं चित्तौड़गढ़ में मुख्य रूप से पायी जाती हैं। नागौरी नस्ल नागौर एवं जोधपुर में मिलती है। पूर्वी जिलों अलवर, भरतपुर एवं जयपुर में मुर्रा नस्ल की भैंसें पाई जाती हैं। राज्य की जखराना, अजमेरी, परबतसरी एवं मारवाड़ी नस्ल की बकरी और बीकानेरी, मारवाड़ी, चोखला, मालपुरा नस्ल की भेड़ें दुग्ध, ऊन एवं मांस के लिए अपनी खास पहचान रखती हैं। इनमें मालानी नस्ल बाड़मेर जिले की बालोतय और सिवाना पंचायत समितियों में पायी जाती है। इसी नस्ल के घोड़े घुड़सवारी एवं पोलो के लिए विख्यात हैं। बीकानेरी ऊँट जहाँ भारवाहन एवं लंबी यात्राओं के लिए उपयुक्त है वहीं जैसलमेरी नस्ल के ऊँट अपनी आकर्षक चाल के लिए विख्यात हैं। कुक्कुट पालन का भी राज्य में तीव्र विकास किया जा रहा है।

गोपाल योजना

राज्य में सघन पशु प्रजनन की यह महत्त्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की गई है। योजना प्रारंभ में उदयपुर, कोटा, झालावाड़, बूंदी, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़, टोंक, सवाईमाधोपुर एवं धौलपुर जिलों में लागू की गई। संबंधित जिलों में चयनित शिक्षित ग्रामीण युवकों को पशुपालन की उन्नत गतिविधियों का प्रशिक्षण दे कर नाकारा पशुओं का शत प्रतिशत बंध्याकरण, चारा विकास, मिनीकिटस, बीज वितरण, पशु रखरखाव हेतु पशु पालकों को जानकारी प्रदान करना, कृमिनाशक दवाइयों के उपयोग हेतु प्रोत्साहन देना, बांझपन शिविरों का आयोजन करना तथा सन्तुलित पोषाहार वितरण करने के कार्य सुपुर्द किये गये हैं। यह युवक गोपाल कहे जायेंगे। योजना चयनित सभी जिलों की चार-चार पंचायत समितियों में प्रारंभ कर आठवीं योजना के अंत तक इन जिलों की सभी पंचायत समितियों में लागू करने का लक्ष्य रखा गया है। प्रत्येक पंचायत समिति में 7 से 10 गोपाल कार्य करेंगे। प्रत्येक गोपाल 2000 प्रजनन योग्य पशुओं पर कार्यरत होगा। चयनित गोपालों को आवश्यक प्रशिक्षण दिया जा चुका है। गोपाल अपने अपने क्षेत्रों में काम कर रहे हैं। इस योजना से बेरोजगार पढ़े-लिखे युवकों को रोजगार

मिला है ।

कृत्रिम गर्भाधान

पशु नस्ल सुधार, पशुधन विकास की प्रथम आवश्यक एवं महत्वपूर्ण कड़ी है । वर्ष 1989-90 से प्रत्येक पशु चिकित्सालय, औषधालय तथा मूल ग्राम आधार योजनाओं की संस्थाओं द्वारा हिमकृत वीर्य प्रणाली से कृत्रिम गर्भाधान का कार्य सम्पादित किया जा रहा है ।

विभाग को प्रतिवर्ष 5 से 6 लाख डोज़ हिमकृत वीर्य की आवश्यकता होती है । पशु संवर्द्धन विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत दुग्ध उत्पादन में वृद्धि के लिए विदेशी सांडों से संकर प्रजनन का कार्य किया जाता है । पशुपालन विभाग के पास कुल 1338 पशु उपचार इकाइयां हैं जिनमें सभी में कृत्रिम गर्भाधान किया जाता है ।

हिमकृत वीर्य के रख-रखाव के लिए तरल नत्रजन की जरूरत होती है । इसकी आपूर्ति के लिए पांच तरल नत्रजन संयंत्र बस्सी (जयपुर), नागौर, बूंदी, झालावाड़ एवं बांसवाड़ा में कार्यरत हैं । प्रत्येक संयंत्र में प्रतिमाह 2000 से 3000 लीटर तरल नत्रजन का उत्पादन होता है ।

पशु प्रजनन फार्म

देशी गो वंश में नस्ल सुधारने के लिए उन्नत सांडों की उपलब्धता के लिए राज्य के तीन पशु प्रजनन केन्द्रों पर मेवाती, गीर, हरियाणा और नागौरी नस्लों का संवर्द्धन किया जाता है । ये केन्द्र डग (झालावाड़), कुम्हेर (भरतपुर) एवं नागौर में कार्यरत हैं । यहां पर प्रति वर्ष 60 उन्नत नस्ल के बछड़े होते हैं, जिन्हें पशुपालकों को उपलब्ध कराया जाता है । जैसलमेर, बीकानेर, बाड़मेर के कुछ हिस्सों में नस्ल सुधार के लिए इन क्षेत्रों में ही उन्नत नस्ल के सांड उपलब्ध कराये जाते हैं ।

शूकर विकास कार्यक्रम

कमजोर वर्ग के आर्थिक विकास के लिए शूकर पालन लाभदायक प्रवृत्ति है । केन्द्र सरकार के सहयोग से उन्नत नस्ल के शूकर उपलब्ध कराने की योजना राजस्थान में क्रियान्वित है । विशिष्ट पशुधन विकास योजना के अन्तर्गत अलवर एवं भरतपुर जिले में शूकर पालकों को लाभान्वित करने के लिए अलवर में शूकर विकास फार्म खोला गया है । यहां विदेशी नस्ल के श्वेत शूकरों का आधुनिक तकनीक से पालन-पोषण कर उन्हें निजी शूकर पालकों को वितरित किया जाता है । प्रायोगिक तौर पर प्रारंभ में इन जिलों में योजना के अन्तर्गत 1000 से अधिक निर्धन परिवारों को बैंक से ऋण एवं अनुदान दिला कर विदेशी नस्ल की शूकर इकाई वितरित करने में उन्हें सुदृढ़ आर्थिक संबल मिला है । शूकर पालन प्रवृत्ति को राज्य के अन्य हिस्सों में भी प्रोत्साहन मिलने लगा है ।

ऊँट एवं घोड़ा विकास योजनाएं

रेगिस्तानी इलाकों का बहुमूल्य पशु ऊँट मानव सेवाओं की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है । अनुमान है कि राजस्थान में देश के 70 प्रतिशत ऊंट पाये जाते हैं । अनुमानतः राज्य में उपलब्ध साढ़े सात लाख ऊंटों बीकानेरी एवं जैसलमेरी दो ऊंटों की नस्लें पाई जाती हैं । सीमा सुरक्षा के लिए ऊंटों को प्रशिक्षण दिया जाता है । ऊंटों का प्रजनन काल शीत ऋतु होता है । ऊंटों की अच्छी नस्ल के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा बीकानेर के पास जोहड़ बीड़ में उष्ट्र प्रजनन फार्म क्रियाशील है ।

बाड़मेर जिले की सिवान तहसील में मालानी नस्ल के घोड़े पाये जाते हैं । राजस्थान में 1988 की पशु गणना के अनुसार 29 हजार घोड़े हैं । इनमें कमी आती जा रही है । घोड़े 1951 में 1.27 लाख थे । अतः उन्नत घोड़ा उपलब्ध करा कर इनके संवर्द्धन के प्रयास किये जा रहे हैं ।

बकरी विकास कार्यक्रम

बकरी पालन से आर्थिक स्रोतों का विकास करने और बकरी पालक कमजोर वर्ग के परिवारों को कुपोषण से बचाने के लिए राज्य सरकार ने स्विट्जरलैंड सरकार के सहयोग से राज्य में बकरी विकास एवं चारा उत्पादन योजना प्रारंभ की है । अजमेर जिले के रामसर ग्राम में इस परियोजना पर कार्य करने के लिए एक फार्म का विकास किया गया है । अल्पाइन एवं टोगनबर्ग उन्नत नस्ल के बकरे मंगवाकर राज्य के बकरी पालकों में वितरित किये जा रहे हैं । प्रथम चरण में यह योजना अजमेर, भीलवाड़ा एवं सिरोही जिलों में जहां बहुसंख्यक बकरी पालक हैं, शुरू की गई है ।

चारा विकास

पशुधन विकास के साथ साथ पौष्टिक पशु आहार पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है । राज्य में 1959 से खाद्य एवं चारा विकास कार्यक्रम संचालित है । उपलब्ध चारे के संरक्षण के लिए 'साईलेज' प्रदर्शन भी आयोजित किये जाते हैं । चारा बीज उत्पादन के लिए 150 एकड़ भूमि उपलब्ध कराई गई है । इसमें 65 एकड़ सिंचित तथा 85 एकड़ असिंचित भूमि पर उन्नत चारा बीज तैयार कर पशुपालकों को उपलब्ध कराया जाता है । पशु प्रजनन केन्द्रों एवं गौ शालाओं के माध्यम से भी उन्नत

चारा उत्पादन का कार्य किया जा रहा है । मरू विकास एवं सूखा संभाव्य क्षेत्र के अन्तर्गत वर्ष 1989-90 में झुंझुनू, चुरू, कोटा, झालावाड़, उदयपुर एवं बांसवाड़ा जिलों में 0.5 हेक्टेयर क्षेत्र में प्रदर्शन हेतु राज्य सरकार द्वारा 690 रुपये प्रति प्रदर्शन की दर से बीज की निशुल्क व्यवस्था की गई । अच्छे चारे की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए यूरिया, मोलेसिस से उपचारित करने हेतु भी प्रदर्शनी लगाई जा रही हैं ।

कुक्कुट एवं बत्तख पालन

वर्ष 1956 तक उदयपुर, जयपुर एवं अजमेर में कुक्कुट शालाएं थीं । इनमें 1000 पक्षियों का वितरण कुक्कुट पालकों को किया जाता था । अब राज्य में अलवर, जोधपुर, कोटा एवं टोंक में भी कुक्कुट शालाएं कार्यरत हैं ।

राज्य में कुक्कुट पालन पर निम्न आय वर्ग के लोगों को अच्छा व्यवसाय उपलब्ध हुआ है । कुक्कुट पालकों की चूजा संबंधी मांग की आपूर्ति के लिए प्रयास जारी है ।

आदिवासियों को अतिरिक्त आर्थिक संसाधन उपलब्ध कराने के लिए बत्तख पालन प्रयासों के परिणाम भी संतोषजनक रहे हैं । जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग द्वारा बांसवाड़ा में बत्तख चूजा केन्द्र इस दिशा में नया प्रयास है ।

पशु संरक्षण

पशुधन संरक्षण के लिए रेबीज की रोकथाम, सर्रा रोकथाम, कुक्कुट रोग निदान सेवा, बहुउद्देश्यीय पशु चिकित्सालय, पशुपालन विद्यालय तथा चल शल्य चिकित्सा इकाई की योजनाओं के माध्यम से प्रयास किये जा रहे हैं ।

वर्ष 1990-91 में राज्य में 8 बहुउद्देश्यीय, 792 पशु चिकित्सालय, 426 औषधालय, 120 स्वास्थ्य केन्द्र, 55 चल पशु चिकित्सा इकाई, 90 सतर्कता इकाई एवं सुरक्षा चौकी, 3 आरक्षण दल, 7 सर्रा रोकथाम केन्द्र, 17 कुक्कुट शाला, 3 पशु प्रजनन केन्द्र संचालित हैं ।

एकीकृत पशु विकास योजना

आठवीं पंचवर्षीय योजना में यह कार्यक्रम जयपुर एवं बीकानेर संभाग में क्रियान्वित किया जायेगा । पशुधन के सर्वांगीण विकास के महत्त्व को ध्यान में रखा गया है । योजना में प्रति 2000 प्रजनन योग्य पशुओं पर सघन रूप से नस्ल सुधार का का कार्य किया जायेगा । दोनों संभागों के चिकित्सालयों में पशुधन सहायक एवं वी.ए. को मुख्य संस्था से 5 से 8 कि.मी. दूर इस प्रकार सेवा में लगाया जायेगा कि उसके अधीन 2000 पशुओं को कृत्रिम गर्भाधान सेवाएं उपलब्ध कराई जा सकें ।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

पशुधन विकास के विविध कार्यक्रमों से रोजगार के अवसर बढ़े हैं । गोपाल योजना से शिक्षित बेरोजगारों को तकनीकी जानकारी देकर रोजगार में लगाया गया है । पशु नस्ल सुधार से ऊन की अच्छी किस्म विकसित होने एवं दुग्ध व्यवसाय बढ़ने से पशुपालकों को अच्छा आर्थिक लाभ मिलने लगा है । अल्प आय वर्ग के परिवारों के लिए शूकर, मुर्गी, बतख पालन प्रवृत्ति प्रारंभ कर उन्हें अतिरिक्त आय के साधन उपलब्ध कराये गये हैं । राज्य में पशुपालकों की स्थिति बेहतर बनाने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है । पशुधन को निरोग रखने एवं अच्छी नस्ल के पशु, पशुपालकों के पास हों इस पर विशेष ध्यान केन्द्रित है ।

सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी
सूचना केन्द्र
कोटा-324001 (राजस्थान)

बकरी पालन व्यवसाय की वृहद संभावनायें

□ डॉ० वाणी विनायक □
□ डॉ० सुनील अवस्थी □

अपनी प्रकृति के अनुसार बकरियों की यह विशेषता है कि प्रत्येक वातावरण, जलवायु में स्वयं को सहजपूर्वक ढाल लेती हैं। सामान्यतः गरीब की गाय की संज्ञा से विख्यात बकरियां वर्तमान में गरीब किसानों एवं भूमिहीन मजदूरों द्वारा निम्न स्तर पर पाली जा रही हैं। परन्तु बकरी पालन के विस्तार हेतु हमारे ग्रामीण क्षेत्र में वृहद संभावनायें विद्यमान हैं। बकरी पालन व्यवसाय, हमारे ग्रामीणजनों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने व उच्च पोषण स्तर प्रदान करने के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्र में उचित रोजगार के अवसर उत्पन्न करने में सक्षम है। अत्यधिक जनसंख्या वाले राज्य जैसे उत्तर प्रदेश, जहां 72.6 प्रतिशत कृषक सीमान्त वर्ग के हैं व जिनके पास कुल कृषि योग्य भूमि का 28 प्रतिशत (वर्ष 1985-86 की कृषि गणना के आधार पर) व प्रत्येक सीमान्त कृषक के पास औसतन 0.36 हेक्टेयर भूमि है। कृषि उत्पादन में प्रयुक्त निवेशों की बढ़ती हुई लागतों व उत्पादन की अनिश्चितताओं के कारण कृषि व्यवसाय छोटे-छोटे जोतों वाले कृषकों के लिये लाभदायक नहीं रह गया है जिसके फलस्वरूप यह आवश्यक है कि लघु सीमान्त कृषकों एवं कृषक मजदूरों के लिये अतिरिक्त आय के विभिन्न स्रोतों एवं रोजगार के विभिन्न अवसर उत्पन्न करने हेतु, अन्य पूरक व्यवसाय जैसे-दुग्ध व्यवसाय, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, सूअर पालन एवम् अन्य संबंधित लघु व्यवसायों के विकास पर उचित ध्यान दिया जाए। दुग्ध व्यवसाय के क्षेत्र में गाय पालन एवं भैंस पालन पर अत्यधिक जोर देकर दुग्ध उत्पादन में वृद्धि सुनिश्चित की गयी है परन्तु गाय पालन एवं भैंस पालन, आधुनिक डेरी तकनीक के कारण अत्यधिक पूंजी विनियोगी हो गया है जबकि बकरी पालन गरीब पशु पालकों के लिये आर्थिक दृष्टि से अपेक्षाकृत अत्यधिक उपयोगी है।

वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्र के पिछड़े व कमजोर वर्ग को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ करने के लिये सरकार विभिन्न विकास कार्यक्रमों जैसे–समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, विशेष पशुधन परियोजना, विशेष पशुधन विकास कार्यक्रम, सघन पशुधन विकास कार्यक्रम इत्यादि के अन्तर्गत 25 प्रतिशत से 33.3 प्रतिशत तक सहायता देकर दुधारू पशु उपलब्ध कराती है चूंकि ग्रामीण अंचलों में बकरी पालन हेतु वृहद संभावनायें हैं तथा बकरी पालन व्यवसाय, सीमान्त एवं लघु कृषकों, कृषक मजदूरों एवं अन्य पिछड़े व कमजोर वर्ग के लोगों को न केवल विभिन्न रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में सक्षम हैं बल्कि उन्हें सुदृढ़ आर्थिक व सामाजिक स्तर प्रदान कर सकता है, आवश्यकता है कि बकरी पालन हेतु इस वर्ग को प्रोत्साहित किया जाय तथा बकरी पालन को मात्र जीविकोपार्जन स्तर से उठाकर इसे व्यवसायिक स्तर पर विकसित किया जाय।

बकरी पालन व्यवसाय के लाभ

विभिन्न शोध अध्ययनों से बकरी पालन की उपयोगिता एवं इसकी आर्थिक महत्ता का पता चलता है जिसके मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं :

- **अपेक्षाकृत कम वित्तीय विनियोजन:** वर्तमान में अच्छी नस्ल की गाय की कीमत दुग्ध उत्पादन के आधार पर औसतन 10000 रुपये से 15000 रुपये है जबकि अच्छी नस्ल की बकरी जैसे–जमुनापारी, बरबरी, मुहेर इत्यादि की लागत औसतन 1500 रुपये से 2000 रुपये तक है तथा अच्छी प्रजातियों की बकरियां औसतन 6 वर्ष से 10 वर्ष तक दुग्ध देती हैं।
- **भवन एवं अन्य रख-रखाव लागत अपेक्षाकृत बहुत कम:** बकरियां आकार में छोटी होती हैं अतः इनके रख-रखाव पर अन्य दुधारू पशु जैसे गाय व भैंस की अपेक्षा कम खर्च आता है क्योंकि इन्हें केवल अत्यधिक बरसात व गर्मी से ही बचाना पड़ता है।
- **कम अवस्था में ही दुग्ध उत्पाद:** प्रदेश में उत्तम नस्ली बकरियां प्रायः 12 से 15 महीने के भीतर (लगभग 35 कि.ग्रा. वजन के साथ) दुग्ध उत्पादन प्रारम्भ कर देती हैं व 4 से 6 माह तक दूध देती हैं। अतः एक उत्तम नस्ल की बकरी उचित पोषण एवं रख-रखाव की स्थिति में 16 से 20 माह में दूध देना प्रारम्भ करती है तथा अपने साधारणतया 305 दिनों के दूध देने की अवधि में 400 से 600 कि.ग्रा. दूध देती है।

तालिका 1 प्रदर्शित करती है कि बकरी का दूध अन्य दुधारू पशुओं जैसे–गाय, भेड़ व भैंस के दुग्ध में पाये जाने वाले प्रोटीन व वसा के प्रतिशत से अधिक भिन्न नहीं है। बकरी का दूध

* लेखक सहकारी एवं कार्पोरेट प्रबन्ध, शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, लखनऊ से संबद्ध हैं।

अपेक्षाकृत सुपाच्य होता है ।

तालिका-I

दूध की संरचना (प्रतिशत में)

	वसा	प्रोटीन	लेक्टोज	ऐस	कुल ठोस पदार्थ	जल
गाय	4.9	3.4	4.6	0.74	13.64	86.36
भैंस	7.3	3.8	4.9	0.78	16.75	83.22
बकरी	4.0	3.7	4.5	0.85	13.05	86.95
भेड़	6.2	5.2	4.7	0.90	17.00	83.00

- बकरियों से प्राप्त खाद भूमि को उपजाऊ बनाती है : राष्ट्रीय अर्थशास्त्र अनुसंधान परिषद् द्वारा यह पाया गया है कि भारतवर्ष में 20 प्रतिशत गाय का गोबर ईंधन कार्य हेतु प्रयुक्त होता है जबकि बकरी से प्रदत्त समस्त गोबर (फिसिंग) का प्रयोग कृषि योग्य भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने हेतु होता है। चूंकि बकरियां जुगाली करने वाली, कम मात्रा में भोजन चरकर ग्रहण करने वाली प्राणी हैं अतः अत्यधिक चराही (ओवर ग्रेजिंग) की समस्या नहीं होती और चूंकि बकरियां स्वभाव से चंचल होती हैं तथा वृहद् क्षेत्रफल में दौड़कर भोजन प्राप्त करती हैं जिसके फलस्वरूप अत्यधिक क्षेत्र में खाद पहुंचाती हैं जिससे वनस्पति का विकास होता है व इनके द्वारा जल्द-जल्द चरने से व्यर्थ घासपात का विकास स्वतः नियंत्रित हो जाता है परन्तु प्रायः लोगों में यह भ्रान्ति व्याप्त है कि बकरियां वनस्पति सम्पदा का विनाश करती हैं तथा भूमि को ऊसर बनाने हेतु जिम्मेदार हैं ।

बकरियां मांस उत्पादन का मुख्य स्रोत होती हैं व बकरी का मांस अन्य मांसों की अपेक्षा अधिक पसन्द किया जाता है । जब बकरियां दुग्ध उत्पादन बन्द कर देती हैं, इन्हें मांस उत्पादन हेतु उपयोग कर लिया जाता है ।

उत्तर प्रदेश में बकरी पालन व्यवसाय की स्थिति

उत्तर प्रदेश पशुधन जनगणना के अनुसार वर्ष 1978 में प्रदेश में बकरियों की संख्या 84.62 लाख (जिसमें से 9.48 लाख बकरियां पहाड़ी क्षेत्र में) थीं, जो वर्ष 1988 में बढ़कर 113.21 लाख (पहाड़ी क्षेत्र में केवल 9.14 लाख) हो गयी तथा 1978 से 1988 में 33.78 प्रतिशत वृद्धि रही तथा वार्षिक वृद्धि दर औसतन 3.37 प्रतिशत रही । उपरोक्त समय में बकरियों की संख्या, उनकी आयु, नर-मादा प्रतिशत इत्यादि को विवरण तालिका-II प्रदर्शित करती है :

तालिका- II

	वर्ष (संख्या लाख में)		
आयु	1978	1982	1988
एक वर्ष से कम आयु की नर संतति की संख्या	9.97	14.15	17.78
एक वर्ष से कम आयु की मादा संतति की संख्या	42.41	47.06	55.21
एक वर्ष से कम आयु के (किड्स)	32.44	35.65	40.22
कुल संख्या	84.82	96.86	113.21

स्रोत : (उ. प्र. पशुपालन विभाग की "प्रगति" पेज-6)

नर बकरी की संख्या, मादा बकरी की संख्या की अपेक्षा कम है क्योंकि ज्यादातर नर संतति का प्रयोग मांस उत्पादन हेतु करने के लिये उनका वध 9 से 12 महीने की आयु के मध्य कर दिया जाता है। प्रदेश में कुल मांस उत्पादन में बकरियों का योगदान 20 प्रतिशत है । प्रदेश में प्रति बकरी मांस उत्पादन लगभग 13.635 कि.ग्रा. रहा तथा विगत पांच वर्षों में बकरी के मांस उत्पादन में वृद्धि 57.59 प्रतिशत तथा औसतन वृद्धि लगभग 11.6 प्रतिशत रही ।

दुग्ध उत्पादन

उत्तर प्रदेश में बकरियों द्वारा औसतन दुग्ध उत्पादन, पशुपालन विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा किये गये सर्वेक्षण के आधार पर वर्ष 1990-91 में 0.575 कि.ग्रा. प्रतिदिन, प्रति बकरी था । वर्ष 1982-83 में प्रदेश में बकरियों द्वारा दुग्ध उत्पादन 3.79 लाख मीट्रिक टन था जबकि कुल दुधारू पशुओं द्वारा दुग्ध उत्पादन 66.66 लाख मीट्रिक टन था । इस प्रकार कुल दुग्ध उत्पादन में बकरियों का योगदान 5.68 प्रतिशत था तथा वर्ष 1991 में बकरियों द्वारा कुल दुग्ध उत्पादन बढ़कर 5.68 लाख मीट्रिक टन तक पहुंच गया व दुधारू पशुओं द्वारा कुल उत्पादन 96.92 लाख मीट्रिक टन रहा । वर्ष 1982-83 से 1990-91 तक कुल दुधारू पशुओं के दुग्ध उत्पादन में वृद्धि 45.39 प्रतिशत तथा वार्षिक वृद्धि दर लगभग 5.67 प्रतिशत रही जबकि बकरियों के उक्त अवधि में दुग्ध उत्पादन में वृद्धि 49.86 प्रतिशत रही तथा वार्षिक वृद्धि लगभग 6.2 प्रतिशत रही । इस प्रकार वर्ष 1991 में कुल दुग्ध उत्पादन में बकरियों का योगदान 5.86 प्रतिशत रहा । यह ध्यान देने योग्य है कि बकरियों द्वारा दुग्ध उत्पादन में वृद्धि न्यूनतम वित्तीय एवं तकनीकी सहायता से हुई जबकि अन्य दुधारू पशुओं के दुग्ध उत्पादन में वृद्धि हेतु विभिन्न

पशुधन विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत समुचित वित्तीय एवं तकनीकी सहायता प्रदान की गयी। पशुधन विभाग उत्तर प्रदेश के पास बकरी पालन हेतु वर्ष 1950-51 तक मात्र एक ही फार्म था, जिसकी संख्या 1990-91 तक बढ़कर केवल 6 हुई है। अतएव बकरी पालन व्यवसाय के विस्तार हेतु वांछित सहयोग का अभाव रहा है।

इस वर्ष प्रजनन कार्यक्रमों के प्रभाव से संबंधित एक अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि बकरी का दूध विशेषतया इटावा मंडल व पश्चिमी उत्तर प्रदेश में, वर्ष में दो, तीन माह तक, दुग्ध उत्पादकों द्वारा दुग्ध संघों को गाय व भैंस के दूध के साथ बेचा जाता है तथा उपभोक्ताओं द्वारा इस दुग्ध की ग्राह्यता सम्बन्धी कोई समस्या नहीं है।

प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में, जहां पूर्ण रोजगार उपलब्ध न होना एक गंभीर समस्या है, बकरी पालन के विकास एवं विस्तार से विशेषतया लघु एवं सीमान्त कृषकों, अकृषकों एवं अल्प संसाधनों वाले व्यक्तियों के साथ-साथ ग्रामीण महिलाओं एवं बच्चों को भी ग्रामीण क्षेत्र में ही रोजगार उपलब्ध होगा तथा महिलाएं व बच्चे बकरी पालन में सरलता पूर्वक भूमिका निभा सकेंगे।

उत्तर प्रदेश में बकरी पालन व्यवसाय के प्रमुख अवरोध

- बकरी के दुग्ध में एक विशेष प्रकार की गन्ध होती है जिससे इसे बहुत कम लोगों द्वारा पसन्द किया जाता है। अतएव आवश्यक है कि इस गन्ध को दूर किया जाए, जिससे इसका विपणन सरलता से किया जा सके।

- बकरियां बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं जैसे–मास्टिटिस, छुआछूत सम्बन्धी बीमारी, ब्रूसेलोसिस (मालटम्बर) चेचक, मुंह व पैर सम्बन्धी रोग तथा जीवाणुओं व कीटाणुओं सम्बन्धी अन्य रोग। ऐसी बीमारियों से बचाव किये बगैर बकरी पालन व्यवसाय लाभदायक नहीं हो सकता। प्रदेश में पशु चिकित्सा सुविधा, विशेषतया पहाड़ी क्षेत्र में व सुदूर गांवों में सुलभ नहीं है व पशु चिकित्सा सम्बन्धी औषधियों व सेवाओं की लागत अधिक है।

- वर्तमान में उत्तर प्रदेश में बकरियों का औसत दुग्ध उत्पादन 0.575 कि.ग्रा. प्रतिदिन, प्रति बकरी है व बकरी पालन व्यवसाय केवल ग्रामीण क्षेत्र से ही जुड़ा है तथा बकरियों की दुग्ध उत्पादन क्षमता बढ़ाने हेतु तकनीकी निवेश (टेक्निकल-इनपुट) द्वारा नस्ल सुधारने हेतु प्रयास करने की नितान्त आवश्यकता है क्योंकि वर्तमान में प्रदेश में 90 प्रतिशत बकरियां देशी तथा अवर नस्लीय हैं जिनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता सीमित है।

- अच्छी नस्ल के बकरों का चिन्हींकरण व प्रमाणीकरण नहीं किया गया है जिससे उनका उपयोग नस्ल सुधार हेतु प्राकृतिक पशु प्रजनन सेवा द्वारा किया जा सके।

- बकरी पालन को व्यवसायिक स्तर पर विकसित करने के लिये बहुत कम प्रयास किये गये हैं तथा चिकित्सा, प्रजनन में दुग्ध के विपणन हेतु आवश्यक तकनीक व संस्था का अभाव है।

संस्तुतियां

उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में, अतिरिक्त आय का मुख्य स्रोत पशुपालन एवं दुग्ध व्यवसाय है। बकरी पालन व्यवसाय में अच्छी नस्ल की बकरियों की उपलब्धता अन्य विशिष्टताओं तथा बकरी पालन व्यवसाय से जुड़े कमजोर वर्ग के एक बड़े समुदाय के कारण प्रदेश में इसे व्यवसायिक स्तर पर विकसित करने हेतु वृहद् संभावनाएं विद्यमान हैं। भौगोलिक विशेषताओं के कारण प्रदेश के प्रत्येक क्षेत्र में बकरी पालन व्यवसाय विकसित व विस्तारित किया जा सकता है। जहां पहाड़ी क्षेत्र बकरी पालन हेतु आदर्श है वहीं यह व्यवसाय प्रदेश के अन्य क्षेत्रों जैसे– मैदानी, पठारी व असमतल बुन्देलखण्ड क्षेत्र में, सरलता पूर्वक व्यवसायिक स्तर पर विकसित व प्रचलित किया जा सकता है, जिससे न केवल ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार व स्वरोजगार के विभिन्न अवसर सृजित होंगे बल्कि समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग को अतिरिक्त आय प्राप्त होगी व साथ ही उन्हें उच्च पोषण स्तर भी प्राप्त होगा। उत्तर प्रदेश में बकरी पालन को व्यवसायिक स्तर पर विकसित करने हेतु निम्नलिखित प्रयास करने होंगे:–

1988 में बकरियों का प्रदेश में कुल दुग्ध उत्पादन में योगदान 5.68 प्रतिशत था तथा प्रति बकरी का औसत दुग्ध उत्पादन 0.575 कि.ग्रा. प्रतिदिन है जबकि अच्छी प्रवर नस्लीय बकरियों का औसत दुग्ध उत्पादन 4 से 5 कि.ग्रा. प्रतिदिन है। वर्तमान में प्रदेश की 90 प्रतिशत बकरियां देशी व अवर नस्लीय हैं जिनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता में समुचित वृद्धि हेतु "नस्ल सुधार कार्यक्रम" लागू किया जाना चाहिए। नस्ल सुधार कार्यक्रम को सफलता पूर्वक लागू करने हेतु निम्नलिखित प्रयास किये जायें :

स्थानीय भौगोलिक एवं मानसूनी परिस्थितियों के अनुसार बकरी प्रजनन केन्द्रों का गठन विभिन्न क्षेत्रों में किया जाये एवं उसमें प्रवर नस्लीय बकरियों जैसे–जमुनापारी, बरबरी, मुहेर, पश्मिना इत्यादि के अपने ही प्रजनन क्षेत्र में विकास पर जोर

दिया जाये ।

नैसर्गिक प्रजनन सेवा द्वारा नस्ल सुधार को अधिक प्रचलित किया जाये जिसके लिये उत्तम नस्ल के नर बकरों (जिनकी माताएं उच्च दुग्ध उत्पादन क्षमता युक्त हों) का चिन्हींकरण एवं प्रमाणीकरण करना व उनके वध को रोकना आवश्यक होगा, जिससे उनका प्रयोग प्रजनन कार्य हेतु किया जा सके ।

अच्छे प्रगतिशील पशु पालकों का चिन्हींकरण कर उन्हें बकरी पालन हेतु प्रशिक्षित किया जाय, जिससे वे उत्तम नस्लीय बकरियां पालें ।

बकरियों में कृत्रिम प्रजनन सेवा अभी परीक्षण स्तर पर है, परन्तु आवश्यकता है कि इसे सफलतापूर्वक जल्द विकसित कर लागू किया जाये तथा बकरी पालकों को यह सुविधा द्वार पर ही उपलब्ध कराई जाये । भ्रूण प्रत्यारोपण एवं अन्य नवीनतम जैव तकनीक के माध्यम से बकरी प्रजनन कराकर, नस्ल सुधार कार्यक्रम को लागू किया जाये ।

बकरियां बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं, अतः पशु चिकित्सीय सुविधाओं को अत्यधिक सुदृढ़ किया जाये जिससे बीमारी सम्बन्धी जोखिम को नियंत्रित किया जा सके । सामान्य बीमारियों से सम्बन्धित विशेष पाठ्य सामग्री क्षेत्रीय भाषाओं में तैयार कर वितरित की जाये जिससे पशुपालक उनके लक्षणों के प्रति सजग रहें व आवश्यक निरोधक उपाय व उपचार शीघ्र कर सकें । जिन स्थानों पर बकरी पालन व्यावसायिक स्तर पर प्रचलित हो, पशु चिकित्सकों को समय-समय पर जाकर पशुपालकों की समस्याओं का शीघ्र निदान करना चाहिए तथा क्षेत्रों में टी.एम.डी.डी. टेक्नोलॉजी मिशन फॉर डेरी डेवलेपमेन्ट की योजना चल रही है वहां बकरी हेतु चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करने को भी सम्मिलित किया जाये ।

बकरी पालन व्यवसाय को अधिक प्रचलित करने हेतु निम्न उपाय किये जायें :

- किसी व्यवसाय की सफलता, विकास एवं विस्तार के लिये उचित मूल्य पर विपणन सुविधा उपलब्ध कराना अत्यन्त आवश्यक है । उत्तर प्रदेश में बकरी पालन व्यवसाय के विकास हेतु अनेक संभावनाएं विद्यमान हैं तथा सन् 2000 तक 138 करोड़ मीट्रिक टन दुग्ध उत्पादन के लक्ष्य को प्राप्त करने में बकरियां महत्वपूर्ण योगदान कर सकती हैं । इसलिये वर्तमान दुग्ध व्यवसाय संरचना/दुग्ध मार्गों (दुग्ध संघों व दुग्ध परिषदों द्वारा गठित) का प्रयोग बकरी के दुग्ध विपणन हेतु किया जा सकता है जिसके लिये कुछ अतिरिक्त कन्टेनरों की आवश्यकता होगी जिसे बकरी दूध के उपार्जन हेतु दुग्ध समितियों में रखने की आवश्यकता होगी । बकरी का दूध, गन्ध विशेष के कारण कम लोकप्रिय है तथा इसके सीमित व अनियमित ग्राहक हैं । अतएव दुग्ध प्लान्टों पर इनका प्रसंस्करण कर दुग्ध उत्पादों/रंग एवं मेवे युक्त तरल दुग्ध में प्रयुक्त किया जा सकता है । बकरी पालकों को सहकारी दुग्ध समितियों से जोड़ने पर दोनों को समान रूप से लाभ होगा । प्रदेश में बकरी पालकों को जहां सहकारी समितियों के माध्यम से संगठित करने से उन्हें उचित आर्थिक लाभ प्राप्त होंगे तथा पशु चिकित्सीय सुविधायें, प्रजनन सेवाएं एवं वांछित तकनीकी निवेश व जानकारियां समय से उपलब्ध होंगी । समितियों को दुग्ध उपार्जन में वृद्धि से अधिक लाभ होगा, वहीं सहकारी समितियों के माध्यम से बकरी पालन के व्यवसायिक स्तर पर विकास करने हेतु कृषकों, अकृषकों व आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के लोगों को शिक्षित करने व दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता, अवर नस्लीय बकरों का बंध्याकरण, मां एवं संतति की उचित देखभाल, टीकाकरण एवं पोषण इत्यादि के प्रति जागरूक बनाने हेतु समुचित प्रयास किया जा सकता है ।

- ग्रामीण क्षेत्र के गरीब व पिछड़े वर्ग के लोगों को बकरी पालन हेतु प्रोत्साहित करने के लिये निम्न उपाय किये जाने चाहिए :

- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा अन्य पशुधन विकास व गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के अन्तर्गत गरीब व सामाजिक तथा आर्थिक रूप से विपन्न लोगों को बकरी पालन कार्य हेतु, वित्तीय सहायता समुचित रूप से उपलब्ध कराई जाये तथा एक साथ कम से कम 5 (एक यूनिट) उत्तम नस्ल की बकरियां प्रदान की जायं ।

- बकरियों के बीमे की सुविधा समस्त समितियों पर उपलब्ध कराई जाये ।

- पशुपालन विभाग विभिन्न बकरी दुग्ध परीक्षण प्रदर्शन इकाइयां (गोट मिल्क टेस्टिंग डिमांस्ट्रेशन यूनिट)/क्षेत्रीय परीक्षण इकाइयां (फील्ड टेस्टिंग यूनिट) तथा वैज्ञानिक बकरी पालन प्रदर्शन इकाइयों का गठन किया जाये, जिससे बकरी पालक इस व्यवसाय को अत्यधिक लाभपूर्ण विधि से अपना सकें ।

- बकरी पालन के विकास एवं विस्तार हेतु समुचित प्रचार व प्रसार सुविधा प्रदान की जाये जिससे बकरी पालन व्यवसाय की विशिष्टताओं से पशुपालक अवगत हो सकें व उनमें व्याप्त भ्रांतियां दूर की जा सकें ।

बी-1308, इन्दिरा नगर
लखनऊ-226016

मत्स्य पालन : आजीविका का साधन

□ डॉ० पुष्पेश पाण्डेय □

अथाह समुद्र के खारे पानी में और धरती पर बहने, रुकने वाले मीठे पानी में रहने वाली मछलियों का अपना एक अद्भुत संसार है । सागर से लेकर एक छोटे से पोखर तक की मछली केवल मछली होने के नाते भी संरक्षणीय है । पर जब वह समाज के एक हिस्से के जीवन का, उनकी थाली का भी अंग हो तो उसकी चिन्ता करने का दृष्टिकोण बिल्कुल दूसरा हो जाता है ।

मछली के मामले में हमारा देश दुनिया में छठे और सातवें स्थान के बीच झूलता रहता है । देश के कोई 10 करोड़ लोग मछली खाते हैं । 53.8 लाख मछली पकड़ने और पालने के पेशे में हैं, जिनमें से 32.8 लाख लोग तटवर्ती इलाकों में और शेष नदियों, झीलों और पोखरों के किनारे बसे हैं । कुल मछुआरों का 30 प्रतिशत केरल में है, उसके बाद तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और महाराष्ट्र का स्थान है ।

समुद्र के खारे पानी के अलावा मीठे पानी में मछली पालन के मामले में हम दुनिया में सबसे ज्यादा समृद्ध माने जाते हैं । देश की प्रमुख नदियां, सहायक नदियां, नहरें आदि लगभग 1,40,000 कि.मी. क्षेत्र में फैली हुई हैं । झील और दूसरे जलाशय 29 लाख हेक्टेयर जमीन में हैं । इनके अलावा मछलीपालन के योग्य भूमि लगभग 16 लाख हेक्टेयर के क्षेत्र में है जिसमें से 38 प्रतिशत में या 6 लाख हेक्टेयर में मछली पायी जाती है ।

देश में मछली का कुल उत्पादन लगभग 29 लाख टन के आस-पास है । मछलियों का उत्पादन पिछले एक दशक में लगातार बढ़ा है । यह उत्पादन वृद्धि बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा यंत्र तकनीक से अधिक से अधिक दोहन के फलस्वरूप ही संभव हुई है । आजादी से पहले मछुआरे, पारंपरिक तकनीकों से मछली पकड़ते थे, मछुआरे तब तक किसी के गुलाम नहीं थे, मगर आजादी के बाद 1953 में जब भारत सरकार ने नार्वे के साथ मिलकर भारत नार्वे मत्स्य विकास परियोजना नामक एक दीर्घकालिक दोहन योजना की बुनियाद रखी, उसी दिन से भारतीय मछली तथा अन्य समुद्री उत्पाद संपदा पर विदेशी कंपनियों की नजरें गड़ गईं । देखते ही देखते यूरोप और अमेरिका की दर्जनों बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत की इस लावारिस विपुल संपदा पर टूट पड़ीं ।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा जब से पेट्रोल, और डीजल चालित नौकाओं का उपयोग शुरू हुआ है, मछलियों का स्तर दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है । बढ़ते जल प्रदूषण के कारण नदियों में मछलियां कम से कमतर होने को बाध्य हैं । इसके अलावा इन स्वचालित नौकाओं से भारत के पारंपरिक मछुआरों की दुर्गति बेहद बढ़ी है । इन स्वचालित नौकाओं के बीच देशी पारंपरिक मछुआरे समुद्र और नदियों से घर खाली हाथ लौटने को मजबूर हैं । कभी जिन मछेरे परिवारों का निर्वाह घर का एक अकेला सदस्य करा लेता था, आज उन परिवारों के हर सदस्य को काम ढूंढना पड़ता है, तब भी बमुश्किल दो जून की रोटी का जुगाड़ हो पाता है । बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हस्तक्षेप का सबसे व्यापक असर केरल के छोटे मझोले मछुआरों पर पड़ा है । इनमें से बहुत से मछुआरों ने आज मछली पकड़ना छोड़कर छोटी-मोटी नौकरी करना शुरु कर दिया है ।

मछुआरों की यह स्थिति तब थी जब बहुराष्ट्रीय कंपनियों में इस क्षेत्र में पूंजी निवेश की अनुमति 51 प्रतिशत से कम थी । अब वर्तमान में जबकि उन्हें 100 प्रतिशत पूंजीनिवेश की सुविधा मिल गयी है तब पारंपरिक व्यवसायों का क्या होगा ? सच तो यह है एक प्रदूषण और साथ ही इस धंधे में बढ़ चला व्यवसायीकरण इन्हें कहीं का नहीं छोड़ेगा । कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि मछली और मछुआरे का जीवन सचमुच पानी के बुलबुले जैसा बनता जा रहा है ।

स्मृति कुंज, माला भवन
अल्मोड़ा (उ.प्र.)

मेरा निर्णय सही था

□ महेश चन्द्र श्रोत्रिय □

मुझे अभी भी याद है मैं जब छोटी थी तो अपने घर की बकरियां चराने जाया करती थी। परिवार में पिताजी के खेती-बाड़ी के सिवाय आय का अन्य कोई साधन नहीं था। परिवार में सिर्फ बड़े भाई को पढ़ाया जा रहा था। हम उससे छोटी चार बहनें, सभी घर का काम-काज करतीं, बकरियां चरातीं। मेरा गांव गलन्दर 300 घरों की आदिवासी बस्ती का गांव था। उदयपुर से तो यह 200 किलोमीटर दूर होगा।

मेरे गांव से जब कभी कोई मेले में जाता तो मुझे बहुत अच्छा लगता। बचपन से ही मुझे लगने लगा था कि मुझे बाहर की दुनिया देखनी चाहिए। गांव में कभी कोई मोटर भी आ जाती तो हम गांव के बच्चे मोटर के पास जमा हो जाते। तब लगता दुनिया बहुत बड़ी है। लेकिन बचपन का आनन्द भी कम नहीं था। घर में गाय-भैंस है। दूध पीने को मिलता। फिर गांव की हरियाली बड़ी अच्छी लगती।

खेत से जब मक्की पक कर आती तो उसे तोला जाता। दूध भी कभी बिकता तो पिताजी उसका हिसाब रखते। मुझे भी मन में आता कि हिसाब कितनी कठिन चीज है। पांच वर्ष की रही हूंगी तब मैंने पिताजी से कहा, "मैं स्कूल में पढ़ने जाऊंगी। मेरे लिए स्लेट पेन्सिल ला दो।" मुझे गांव में स्कूल में भर्ती कराया गया। दो वर्ष तक गांव में पढ़ी। गणित का विषय तो स्लेट पर ही पढ़ती। बड़ी आयु की लड़कियां जब अपने विषय कॉपी में लिख कर करती तो मुझे लगा मैं भी इनकी तरह बड़ी कक्षा में आ सकती हूँ।

गांव में एक दिन किसी विभाग की गाड़ी स्वास्थ्य पर कोई फिल्म दिखाने आई। मैंने देखा कि शहर की एक डॉक्टर किसी बच्चे को टीका लगा रही थी। टीका लगाने से बच्चे बीमारी से बच जाते हैं। क्या शहर ऐसा अनोखा है?

एक दिन मैंने पिताजी से कहा कि मुझे शहर के किसी स्कूल में भर्ती करा दीजिए। पिताजी बोले– "सुनीता! अभी तू बच्ची है। तुझे लाड़-प्यार से पाला है। शहर में कैसे पढ़ेगी।" मैंने पिताजी से कहा– "मास्टर जी कह रहे थे शहर के स्कूलों में आदिवासी लड़कियों की फीस नहीं लगती और छात्रावास में रहने के लिए सरकार सहायता करती है।"

आखिर वो दिन आया जब मेरे पिताजी ने यह निर्णय स्वीकार कर लिया कि मुझे आगे की पढ़ाई के लिए तीसरी कक्षा से शहर में पढ़ाया जाये। मोटर में बैठकर डूंगरपुर होते हुए हम उदयपुर आये। उदयपुर के महिला मण्डल स्कूल में मुझे भर्ती कराया गया। यहां स्कूल भवन के अन्दर ही छात्रावास भी था। इसलिए पिताजी ने मुझे छात्रावास में रहने के लिए वार्डन महोदया से अनुमति प्राप्त कर ली।

मैंने देखा विद्यालय प्रांगण में प्राथमिक शाला के अलावा हायर सेकेण्डरी स्कूल, छोटे बच्चों का नर्सरी स्कूल, एक बड़ा पुस्तकालय, खेल का मैदान, सिलाई बुनाई की कक्षा भी थी। शुरू-शुरू में मेरा मन नहीं लगा। लेकिन स्कूल की पढ़ाई और व्यस्त दिनचर्या से मेरा मन लग गया।

छात्रावास में रहने से और विद्यालय की गतिविधियां इतनी थीं कि पता नहीं दिन कब निकलता। सुबह 5 बजे उठना, अपने निवास के कक्ष की सफाई, समय पर नहाना-धोना, समय पर नाश्ता-भोजन, व्यायाम और खेल में बड़ा आनन्द आता। आठ नौ वर्ष बीत गये। अब मैं बाहरवीं कक्षा की छात्रा हूँ।

यहीं पर मैंने अपना प्रिय खेल खो-खो को चुना। जिला स्तर पर इस खेल में मैंने भाग भी लिया। खेल की गतिविधि में अधिक समय लग जाता तब भी मैं सेकेण्डरी परीक्षा में उत्तीर्ण हुई और मुझे अपार खुशी हुई। यह विद्यालय मुझे इसलिए भी पसन्द है कि यहां के छात्रावास की किसी भी लड़की को बिना वार्डन की अनुमति के बाहर नहीं जाने दिया जाता है।

अब मेरी रुचि नृत्य में भी होने लगी। ग्यारहवीं कक्षा पास करते ही वार्षिक उत्सव में मैंने लोक नृत्यों में भाग लिया। मेरे नृत्य को सराहा गया। मैं बहुत खुश हुई। अब तो स्कूल की तरफ से कोई कैम्प बाहर जाता तो मैं उसमें अवश्य सम्मिलित होती हूँ। यदा-कदा पुस्तकालय जाकर अपनी पसन्द की मैग्जीन व अन्य पत्र-पत्रिकायें पढ़ती हूँ। शनिवार की शाम को छात्रावास में ही टी०वी० पर फिल्म भी देखती हूँ। अब तो मुझे मेरी पाठशाला घर जैसी लगने लगी है। लगता है जैसे यह "संस्कारों का मन्दिर" है। अब मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकती हूँ कि शहर में आकर तीसरी कक्षा से आगे पढ़ने का मेरा निर्णय सही था।

क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी
उदयपुर

मधुमक्खियों की प्रबन्ध व्यवस्था

□ डॉ० सी.जे. जुनेजा □

साधारणतः दिसम्बर से फरवरी के दूसरे सप्ताह तक सर्दी का मौसम रहता है। ज्यादातर समय आकाश में बादल छाये रहते हैं और बर्फीली हवाएं चलती हैं। ऐसे समय में मक्खियां लगभग 11.00 बजे से सायं 3.00 बजे तक पराग तथा मकरन्द एकत्रित करती हैं। कई बार ज्यादा ठंड या वर्षा होने पर उन्हें यह कार्य स्थगित भी करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में रानी मक्खी कुछ समय के लिए अण्डे देना बन्द कर देती है जिससे छत्ता धीरे-धीरे कमजोर होने लगता है। इससे बचाव के लिए हेमन्त ऋतु के आगमन पर मक्खियों की उचित प्रबन्ध व्यवस्था करना अति आवश्यक है जिसका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है :

1. मधु बक्सों का निरीक्षण

हेमन्त ऋतु के आगमन से पूर्व मधुवाटिका (ऐपयरी) में स्थित सभी मधुबक्सों का अच्छी तरह निरीक्षण करना चाहिए। बक्सा दोपहर के समय धूप में ही खोलना चाहिए। ऐसा नहीं करने पर बक्से के अन्दर तापमान में गिरावट आती है तथा मक्खियों को काटने का भय रहता है। इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि बक्से में से उपयुक्त मात्रा में खाद्य पदार्थ के अलावा रानी मक्खी स्वस्थ तथा युवा अवस्था में हो।

2. अतिरिक्त आहार देना

किसी मधु बक्से में खाद्य पदार्थ की कमी होने पर मक्खियों को अतिरिक्त खुराक के रूप में चीनी की चाशनी पिलानी चाहिए। इसे रात्रि के समय किसी पात्र में भरकर बक्सों में रख दिया जाता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि चाशनी बक्से पर या बाहर न गिरने पाये। ऐसा होने पर दूसरे बक्सों की मक्खियां आकर्षित होती हैं, तथा उनमें लड़ाई होने की सम्भावना रहती है। जहां तक सम्भ्व हो सभी मधु बक्सों की मक्खियों को चाशनी एक साथ पिलानी चाहिए।

3. मधुबक्सों का उचित जगह पर स्थानान्तरण

मैदानी इलाकों में इस मौसम में सफेदा (यूक्लेप्टिस) तथा कुछ खेती की फसलों जैसे राई, चना व मटर आदि पर फूल आते हैं। इसलिए मधु बक्सों को इनके पास स्थानान्तरित करना चाहिए जिससे धूप तथा उपयुक्त मात्रा में खाद्य पदार्थ मिलता रहे। इसके लिए बक्सों को प्रतिदिन केवल तीन फीट ही स्थानान्तरित करना चाहिए। अगर यह सम्भव न हो तो पहले बक्सों को 5-6 दिन के लिए 3.0 कि.मी. से अधिक दूरी पर रख कर वापिस उचित जगह पर लाना चाहिए। ऐसा न करने पर मक्खियां अपने पहले वाले स्थान पर जाती हैं तथा वहां पर मधु बक्सा न होने पर भटक कर मर जाती हैं।

4. शीतल हवाओं से सुरक्षा

इस मौसम में पश्चिमी बर्फीली हवाएं चलती हैं। इनसे बचाव के लिए मधुवाटिका के पास पेड़ पौधें तथा झाड़ियां आदि होनी चाहिए। इससे मक्खियों को सुरक्षा प्रदान होती है। अगर बक्से में कोई छेद या दरार आदि हो तो उसे चिकनी मिट्टी द्वारा अच्छी तरह बन्द कर देना चाहिए। इससे मक्खियों के शत्रु जैसे छिपकली या चूहे आदि भी बक्से में प्रवेश नहीं कर पाते।

5. कमजोर मधुबक्सों की मक्खियां मिलाना

सर्दी का मौसम शरद्काल के बाद आता है। इस समय ज्यादातर मधुमक्खी पालक रानी मक्खी की उत्पत्ति कर मक्खियों का विभाजन करते हैं। कई बार रानी मक्खी अच्छी हालत में न होने पर सही ढंग से कार्य नहीं करती। इससे छत्ते में मक्खियों की संख्या प्रतिदिन धीरे-धीरे कम होने लगती है। ऐसी स्थिति में इसे किसी दूसरे कमजोर बक्से के साथ जिसकी रानी मक्खी अच्छी हालत में हो मिला देना चाहिए। चूंकि मधुमक्खी के प्रत्येक समूह की गंध अलग-अलग होती है, इसलिए रात्रि के समय एक समूह के बक्से के ऊपर दूसरा बक्सा रखते समय बीच में अखबार रख देते हैं जिसमें पहले से ही बारीक-बारीक छिद्र हों। इससे मक्खियां काफी समय के बाद एक बक्से से दूसरे बक्से में प्रवेश करती हैं और तब तक दोनों समूह की मक्खियों की गंध एक जैसी हो जाती है। इस प्रकार मक्खियों की संख्या बल बढ़ जाता है और सर्दी का मौसम व्यतीत करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती।

6. अतिरिक्त फ्रेमों का निकालना

चूंकि इस मौसम में ठंड के कारण मक्खियों की संख्या कम हो जाती है जिससे कुछ फ्रेम खाली हो जाते हैं। इन्हें बक्से

(शेष पृष्ठ 29 पर)

ग्रामीण विकास में मत्स्य पालन की भूमिका

□ मंजु पाठक □

उत्तर प्रदेश की भूमि नदियों-नहरों (7.20 लाख हेक्टेयर), सिंचाई एवं विद्युत उत्पादन की दृष्टि से निर्मित वृहद् एवं मध्याकार जलाशयों (1.50 लाख हेक्टेयर), प्राकृतिक झीलों (1.33 लाख हेक्टेयर) एवं ग्राम सभाओं में स्थित लघु जलाशयों (1.62 लाख हेक्टेयर) के रूप में कुल 11.65 लाख हेक्टेयर जल क्षेत्र से सम्पन्न होने के कारण मत्स्य विकास कार्यों के लिए बहुमूल्य संसाधन प्रस्तुत करती है । प्रयोग में विभिन्न तरह के जलराशि क्षेत्रों एवं उनमें से मत्स्य पालन के अन्तर्गत सम्मिलित जल क्षेत्रों का विवरण तालिका-1 से स्पष्ट है ।

तालिका- 1 : उत्तर प्रदेश के जल क्षेत्र एवं मत्स्यपालन के अन्तर्गत सम्मिलित जल क्षेत्र

जलराशि	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	मत्स्य पालन के अन्तर्गत सम्मिलित जल क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)
अ. बहता जल क्षेत्र		
नदियाँ एवं नहरें	7.20	-
ब. सीमित जल क्षेत्र		
(i) सिंचाई जलाशय	1.50	1.37
(ii) प्राकृतिक झीलें	1.33	0.05
(iii) ग्रामीण अंचलों के लघु जलाशय	1.62	0.40

स्रोत : उ०प्र० वार्षिक 1989-90

सीमित जल, जो मूलतः मत्स्य पालन के कार्यों हेतु उपयोगी होता है, का क्षेत्रफल 4.45 लाख हेक्टेयर है एवं इसमें से वर्तमान समय तक 1.82 लाख हेक्टेयर (उपलब्ध जल क्षेत्र का 40.8 प्रतिशत) मत्स्य पालन के अधीन लाया जा चुका है ।

वर्ष 1989-90 के उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार भारत के समुद्रों एवं अन्तर्स्थलीय स्रोतों से सम्मिलित रूप से मत्स्य उत्पादन का स्तर 31.35 लाख टन है जिसमें से अन्तर्स्थलीय मत्स्य उत्पादन 13.80 लाख टन है । उत्तर प्रदेश, जो कि अन्तर्स्थलीय राज्य है, में उक्त वर्ष मत्स्य उत्पादन का स्तर 0.906 लाख टन था, जो मत्स्य उत्पादन का 6.56 प्रतिशत है । वर्ष 1989-90 में उत्तर प्रदेश के समस्त स्रोतों से मत्स्य उत्पादन का स्तर 0.934 लाख टन रहा ।

भारत में मछली की प्रति व्यक्ति, प्रति वर्ष उपलब्धता का स्तर 3.5 किलोग्राम एवं उत्तर प्रदेश में मात्र 0.26 किलोग्राम है, जबकि भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद की संस्तुतियों के अनुसार प्रति व्यक्ति, प्रति वर्ष 12.2 किलोग्राम मछली की आवश्यकता है ।

मत्स्य विकास हेतु तालाबों के दीर्घकालीन पट्टे

मत्स्य पालन को बढ़ावा देने हेतु राजस्व विभाग द्वारा तालाबों का 10 वर्ष के लिए पट्टा दिया जाता है । इस कार्य में मत्स्य विभाग के अधिकारियों/कर्मचारियों के स्तर पर सहयोग किया जाता है । तालाबों के पट्टों की प्राप्ति के संबंध में महुआ समुदाय के सदस्यों एवं उनकी सहकारी समितियों को वरीयता दिये जाने का प्रावधान है ।

राज्य स्तर पर वर्ष 1989-90 के अन्तर्गत 4402.98 हेक्टेयर क्षेत्रफल के 4882 तालाब मत्स्य पालकों को दीर्घकालीन पट्टे पर उपलब्ध कराये गये एवं योजना के आरम्भ में क्रमिक प्रगति के अनुसार वर्ष 1989-90 की समाप्ति पर 41468.53 हेक्टेयर क्षेत्रफल के 42,968 तालाबों के पट्टे हो चुके हैं ।

मत्स्य पालन में मत्स्य पालक विकास अभिकरण की भूमिका

राज्य के सभी मैदानी जनपदों में वर्तमान समय में मत्स्य पालक विकास अभिकरण क्रियाशील है, जिसके द्वारा ग्रामीण अंचल के सुदूरवर्ती तालाबों में मत्स्य पालन को बढ़ावा दिये जाने के परिप्रेक्ष्य में उल्लेखनीय भूमिका निभाई जा रही है । सुधार कार्य हेतु मत्स्य पालकों को व्यावसायिक बैंकों के माध्यम से 16,000 रुपये प्रति हेक्टेयर की सीमा तक ऋण व्यवस्था एवं वितरित ऋण पर 25 प्रतिशत अनुदान की सुविधा दी जाती है ।

प्रथम पंचवर्षीय उत्पादन निवेशों (मत्स्य बीज, उर्वरक एवं पूरक आहार) के क्रय हेतु 4000 रुपये प्रति हेक्टेयर की सीमा तक बैंकों से ऋण व्यवस्था एवं वितरित ऋण पर 25 प्रतिशत अनुदान की व्यवस्था है । वर्ष 1989-90 के अन्तर्गत एवं योजना के आरम्भ से वर्ष 1989-90 की समाप्ति तक अभिकरणों की उपलब्धियों का विवरण तालिका-2 से स्पष्ट है ।

तालिका 2 : उत्तर प्रदेश में मत्स्य पालक विकास अभिकरणों की उपलब्धियाँ

मद	इकाई	वर्ष 1989-90 के अन्तर्गत प्रगति		योजना के आरम्भ से वर्ष 1989-90 तक की क्रमिक प्रगति	वर्ष 1990-91 के प्रस्तावित लक्ष्य
		लक्ष्य	उपलब्धि		
(अ) तालाब का पट्टा क्षेत्र	संख्या हेक्टेयर	-	4882	42978	-
(ब) तालाब सुधार हेतु बैंकों को प्रेषित ऋण प्रस्ताव					
क्षेत्रफल	हेक्टेयर	-	5912.74	51137.18	-
धनराशि	रुपया लाख	-	753.056	4744.148	-
(स) तालाब सुधार हेतु बैंकों द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव					
क्षेत्रफल	हेक्टेयर	5340.00	5301.10	40335.47	5150.00
धनराशि (ऋण व अनुदान)	रुपया लाख	-	505.395	2967.804	-
(द) मत्स्य पालकों को प्रशिक्षण	संख्या	4800	5093	45648	5150
(ज) मत्स्य बीज वितरण	संख्या लाख	1683.00	1687.353	-	7181.00

स्रोत- उ०प्र० वार्षिक, 1989-90

मत्स्य बीज उत्पादन

प्रारम्भ में मत्स्य बीज उत्पादन का कार्य मुख्यतः नदियों से बीजों का एकत्रीकरण, उसका पोषण तालाबों में संवर्धन एवं तत्पश्चात् निजी क्षेत्र में वितरण तक सीमित था, किन्तु प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त मत्स्य बीज में मछलियों के अतिरिक्त अन्य अवांछनीय प्रजातियों के बीज की उपस्थिति के परिणामस्वरूप मत्स्य उत्पादन स्तर का प्रभावित होना स्वाभाविक था।

मत्स्य पालन की लोकप्रियता एवं मत्स्य बीज की मांग में निरन्तर वृद्धि को देखते हुए तथा प्रदेश को मत्स्य बीज उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने की दृष्टि से उत्तर प्रदेश मत्स्य विकास निगम द्वारा बड़े आकार की 12 आधुनिक टैनरियों का निर्माण कराया गया है। विश्व बैंक परियोजना के अन्तर्गत लखनऊ में गोमती टैनरी, सुलतानपुर में अमेठी टैनरी, फैजाबाद में सरयू टैनरी एवं एक टैनरी गोरखपुर में स्थापित की गई है। अन्य 7 टैनरियाँ प्रदेश के सीतापुर (महमूदाबाद टैनरियां), बस्ती (राप्ती टैनरी), मथुरा (कोलाहार टैनरी), शाहजहाँपुर (बुटार टैनरी), नैनीताल (काशीपुर टैनरी), मेरठ (परीक्षितगढ़ टैनरी) एवं जालौन (कौन टैनरी) जनपदों में स्थापित की गई हैं।

निजी क्षेत्र में मत्स्य बीज आपूर्ति

मछली पालन हेतु उत्तम प्रजातियों के शुद्ध बीज की प्राप्ति एवं तालाब में उसका संचय एक आधारभूत आवश्यकता है। निजी क्षेत्र के मत्स्य पालकों को निर्धारित दरों पर वांछनीय मत्स्य बीज उपलब्ध हो सके। राज्य स्तर पर वर्ष 1989-90 में 1700 लाख मत्स्य बीज के वितरण का लक्ष्य निर्धारित था, लेकिन 1704.49 लाख मत्स्य बीज ही वितरित किया गया। वर्ष 1990-91 के अन्तर्गत राज्य के निजी मत्स्य पालकों को 1800 लाख मत्स्य बीज वितरित किये जाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

जलाशय प्रबन्ध व्यवस्था

जलाशयों की प्रबन्ध व्यवस्था के संदर्भ में उल्लेखनीय है कि मत्स्य विभाग के नियंत्रण में श्रेणी एक एवं दो के जलाशयों के निस्तारण में मछुआ समितियों को उच्चतम बोली पर 25 प्रतिशत की छूट का प्रावधान है। विभाग के नियंत्रण में श्रेणी तीन एवं चार के जलाशयों का यथासंभव मछुआ सहकारी समितियों एवं मछुआ समुदाय के सदस्यों के लिए सुरक्षित रखने का प्रावधान है। वर्ष 1989-90 के अन्तर्गत मत्स्य विभाग एवं मत्स्य विकास निगम के प्रबन्ध के अन्तर्गत जलाशयों से 13,574 क्विंटल मछली का उत्पादन हुआ।

वृहद् एवं मध्यमाकार जलाशयों से प्रतिवर्ष प्रति हेक्टेयर औसत मत्स्य उत्पादन का वर्तमान स्तर 10 किलोग्राम है जिसे राज्य के विभिन्न भागों में परियोजनाओं की स्थापना करते हुए 20-25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष तक बढ़ाया जाना

प्रस्तावित है ।

मिट्टी पानी का परीक्षण

राज्य स्तर पर वर्ष 1989-90 में 1915 मिट्टी, 993 पानी एवं 519 मंद प्लवक अर्थात् कुल 3427 नमूनों के परीक्षण का कार्य विभागीय प्रयोगशालाओं द्वारा किया गया ।

अनुसंधान कार्यक्रम

वर्ष 1989-90 में राज्य के बरेली जनपद में फरीदपुर मत्स्य क्षेत्र, मथुरा जनपद के कोलाहर टैनरी एवं लखनऊ के उवरसिया मत्स्य क्षेत्र पर जाइन्ट फ्रेशवाटर प्रान के संवर्धन की सम्भावनाओं के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन कार्य प्रारम्भ किया गया है । आशाजनक परिणामों को दृष्टिगत रखते हुए उक्त अध्ययन को आगामी वर्षों में जारी रखा जाएगा ।

पर्वतीय अंचल में कुमायूँ झीलों (भीमताल, सप्तताल, नैनीताल एवं नौकुचिया ताल की) में जल जैविक स्थिति का अध्ययन एवं गोमती नदी में प्रदूषण सम्बन्धी अध्ययन का कार्य वर्ष 1989-90 में किया गया, जिनके वर्ष 1990-91 में सम्पन्न किये जाने की प्रस्तावना है । वर्ष 1990-91 के अन्तर्गत ऊसर भूमि पर निर्मित तालाब में उपचारोपरान्त मछलियों की वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन की प्रस्तावना है । इसके अतिरिक्त समय-समय पर निर्माणाधीन जलाशयों के प्री इम्पाउन्डमेंट एवं जल भराव के उपरान्त पोस्ट इम्पाउन्डमेन्ट सर्वेक्षण भी सुनिश्चित किये जाते हैं ताकि अध्ययन के आधार पर भावी मत्स्य विकास नीतियों का निर्धारण किया जा सके ।

मत्स्य आस्थान का विकास

निर्मित तालाबों के समूह को मत्स्य आस्थान (फिशरीज स्टेट) की संज्ञा दी जाती है । राज्य के सुल्तानपुर, रायबरेली एवं वाराणसी जनपदों में मत्स्य आस्थान स्थापित किये जा चुके हैं जिनसे दुर्बल वर्ग के व्यक्तियों को संबल मिला है । उक्त के अतिरिक्त लखीमपुर खीरी एवं गाजीपुर जनपदों में मत्स्य आस्थान निर्मित कराये जाने की प्रस्तावना है ।

मछुआ समुदाय के सामाजिक-आर्थिक उत्थान हेतु कार्यक्रम

उत्तर प्रदेश में मछुओं की संख्या 9,85,905 है । इसमें से 1,37,116 क्रियाशील मछुए हैं । हाल ही में "नेशनल एसोसिएशन ऑफ फिशरमेन" के द्वारा राज्य के मछुओं की दशा का सर्वेक्षण किया गया, जिसके अनुसार प्रति मछुआ प्रतिवर्ष आय का स्तर मात्र 867 रुपये आंका गया है । मछुओं की सामाजिक-आर्थिक दशा में सुधार लाने के सन्दर्भ में विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है ।

मछुओं को मत्स्य व्यवसाय में स्वावलम्बन प्रदान करने के ध्येय से उनकी सहकारी समितियों के गठन एवं पंजीकरण की व्यवस्था मत्स्य निदेशालय स्तर पर की गई है । वर्तमान समय तक 651 प्राथमिक समितियां, जिनकी सदस्यता 31,941 है, गठित की जा चुकी हैं तथा जनपद स्तरीय संघ एवं राज्य स्तरीय संघ की स्थापना की जा चुकी है ।

दुर्घटना बीमा योजना

दुर्घटना बीमा योजना के अन्तर्गत मछुआ सहकारी समितियों के सदस्यों, जिनकी दुर्घटनावश मृत्यु हो जाये, के परिवार जनों को 1,500 रुपये की धनराशि दिये जाने की व्यवस्था है । वर्ष 1989-90 की समाप्ति तक राज्य में इस योजना से 26,000 मछुओं को लाभान्वित किया जा चुका है । इस कार्यक्रम के अधीन मछुआ बाहुल्य ग्रामों में उनके लिए आवासीय भवन निर्मित कराकर उपलब्ध कराये जाने का प्रावधान है । प्रदेश में 7 मछुआ ग्रामों, 500 भवनों एवं तीन सामुदायिक भवनो के निर्माण कार्य की प्रस्तावना है ।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

वर्ष 1989-90 के अन्त तक 2010 लाभार्थियों को मत्स्य पालन तकनीक का प्रशिक्षण, 610 लाभार्थियों को तालाबों के पट्टों की सुविधा एवं 802 को तालाब सुधार हेतु ऋण एवं अनुदान की सुविधा उपलब्ध कराई गई । 459 लाभार्थियों को नाव-जाल आदि की सुविधा दी गई, 689 फिल्म शो एवं 177 प्रदर्शनियों का आयोजन किया गया तथा 2017 तालाबों की मिट्टी,पानी का परीक्षण किया गया । वर्ष 1989-90 के अन्तर्गत लाभार्थियों को 66.65 लाख मत्स्य बीज वितरित किया गया ।

विशिष्ट अंशदान योजना के तहत पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य विकास

पर्वतीय क्षेत्रों की ठण्डी जलधाराओं, झीलों एवं डिग्गियों में वातावरण के अनुरूप मत्स्य प्रजातियों के पालन एवं विकास की काफी संभावनाएं हैं । विगत वर्षों में पर्वतीय क्षेत्रों की नदियों में वर्जित साधनों के प्रयोग के फलस्वरूप मत्स्य सम्पदा का निरन्तर ह्रास हुआ है, अतः यह विशेष रूप से आवश्यक है कि इन नदियों में उपयुक्त मत्स्य प्रजातियों का पुनर्स्थापन किया जाय । इस कार्य हेतु ट्राउट एवं महाशेर मछलियों का प्रजनन कराकर इनकी अंगुलिकाएं संचित किये जाने का प्रस्ताव है । इसकी अंगुलिकाएं मत्स्य पालकों को वितरित किये जाने एवं झीलों में संचित किये जाने का भी प्रस्ताव है । प्रजनन कार्य हेतु मत्स्य टैनरियों को आधुनिक स्वरुप दिये जाने एवं कुछ नई टैनरियां निर्मित किये जाने की कार्यवाही की जा रही है । इसके

अतिरिक्त कुमायूँ एवं गढ़वाल मण्डल स्तर पर पर्वतीय मत्स्य पालक विकास अभिकरणों की स्थापना भी वर्ष 1990-91 में की जा रही है ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश में मत्स्य पालन संबंधी सुविधाएं उपलब्ध कराकर न केवल मैदानी क्षेत्रों, अपितु पर्वतीय क्षेत्रों के भी विकास की दिशा को सुदृढ़ आधार दिया जा रहा है । राज्य में मत्स्य पालन की प्रगति से निर्बल वर्ग, खास तौर से मछुआरों को आर्थिक स्थिति सुधारने में महती सफलता मिली है । इस तरह मत्स्य पालन में विकास होने से राज्य की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती हुई दिखाई दे रही है ।

ग्राम नगवा, पो0 नगवा
जिला बलिया (उ.प्र.)
पिनकोड 277 401

(पृष्ठ 25 का शेष)

से निकालकर किसी दूसरी जगह सुरक्षित रखना चाहिए । ऐसा न करने पर मोमी कीड़ों द्वारा छत्ते नष्ट होने की सम्भावना रहती है ।

7. मधुबक्सों की पैकिंग करना

सर्दी से बचाव के लिए मधुबक्सों की पैकिंग करनी चाहिए । अन्दर की पैकिंग विशेषकर उन बक्सों में की जाती है जिनमें मक्खियों की संख्या कम हो । इसके लिए पराली, तूरी या बूरा इत्यादि का प्रयोग किया जा सकता है । इन्हें पोलीथीन के थैले में भरकर फ्रेमों के दोनों तरफ रख देते हैं । अगर जगह कम हो तो सभी फ्रेम एक तरफ करके इसे दूसरी तरफ रख देते हैं । इससे बक्से के अन्दर तापमान सामान्य बना रहता है ।

बाहरी पैकिंग द्वारा बक्से को चारों तरफ से इस प्रकार ढका जाता है जिससे ठन्डी हवाएं किसी भी छेद या दरार आदि से अन्दर पहुंच सकें । इस के लिए स्टैण्ड के ऊपर तथा बक्से के नीचे भी पराली डाल देते हैं । चारों तरफ लटकी हुई पराली को कैंची द्वारा काट दिया जाता है जिससे वर्षा के समय यह गीली न हो तथा चींटियां भी अन्दर प्रवेश न कर सकें । अगर बक्से में मक्खियों की संख्या संतोषजनक हो तो केवल बाहर की ही पैकिंग करनी चाहिए । इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रवेश द्वार खुला रहे तथा पैकिंग चुस्त हो जिससे मक्खियां उसमें उलझें नहीं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उचित प्रकार से प्रबन्ध व्यवस्था करने पर मक्खियों को सर्दी में मरने से बचाया जा सकता है । इससे आगामी वसन्त ऋतु के दौरान मक्खियों से अधिक शहद प्राप्ति की आशा की जा सकती है ।

नेशनल डेरी
अनुसंधान संस्थान
करनाल-132001

ग्रामीण बेरोजगार युवक पशुपालन व्यवसाय अपनायें

□ डॉ० अनिल कुमार शर्मा □

ग्रामीण क्षेत्रों से बेरोजगारी समाप्त करने तथा आर्थिक समृद्धि के लिए पशुपालन एक महत्वपूर्ण साधन सिद्ध हो सकता है । ग्रामीण क्षेत्रों से बेरोजगार युवकों के पलायन को रोकने के लिए सरकार द्वारा अनेक कदम उठाये गये हैं । पशुपालन व्यवसाय को आकर्षित बनाने हेतु भी शासन ने अनेक कार्यक्रम चलाये हैं । छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे पहले सबसे निर्धन व्यक्ति के विकास पर बल दिया गया । तत्कालीन प्रधानमंत्री के बीस सूत्रीय कार्यक्रम के एक अंग के रूप में समन्वित ग्राम्य विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो वर्तमान में उ0प्र0 के सभी विकास खंडों में चल रहा है । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले परिवारों के लघु/सीमान्त कृषकों, भूमिहीन मजदूरों एवं ग्रामीण शिल्पकारों को इससे लाभान्वित किया गया है वर्तमान में आई0आर0डी0पी0 योजना के अन्तर्गत लगभग एक तिहाई कार्यकलाप (व्यावसायिक क्षेत्र, उद्योग/सेवाओं तथा व्यापार से सम्बद्ध) पशुपालन क्षेत्र (दुधारू पशु गाय/भैंस क्रय, मुर्गीपालन, भेड़, बकरी पालन, शूकर पालन, बैल जोड़ी क्रय आदि) में किये जाते हैं ।

आई0आर0डी0पी0 योजनान्तर्गत सर्वप्रथम उन परिवारों के युवक/युवतियों को सहायता (बैंक से ऋण तथा 50% अनुदान), अनुदान की वर्तमान अधिकतम सीमा 3000/- रुपये सामान्य जन को तथा 5000 रुपये अनुसूचित जाति/जनजाति के लाभार्थियों के लिए दी जाती है । जिनकी वार्षिक आय 3500 रुपये तक हो इस आय वर्ग के समस्त परिवारों के संतृप्त हो जाने के बाद 4800 रुपये तदुपरान्त 6400 रुपये तथा वर्तमान में 11000 रुपये से अनाधिक वार्षिक आय वाले परिवार के युवकों को सहायता दी जाती है ताकि लाभान्वित परिवार की आय बढ़ सके । राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के नियमों के अन्तर्गत वर्तमान समय में उन्नत प्रजाति के (गाय/भैंस) क्रय करने हेतु उक्त योजनान्तर्गत लगभग चौदह हजार रुपये का ऋण कम ब्याज दर पर आसान शर्तों पर उपलब्ध कराया जाता है जिसमें लाभार्थी को अनुदान भी दिया जाता है । यह सुविधा भेड़-बकरी विकास खंड कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है । उ0प्र0 के पर्वतीय अंचलों में उन्नत प्रजाति में दुधारू पशुओं को मैदानी क्षेत्र/तराई क्षेत्र से लाने पर बल दिया जा रहा है । जनपद-अल्मोड़ा के द्वाराहाट विकास खंड में विगत तीन वर्षों से उक्त योजनान्तर्गत लाभान्वित व्यक्तियों को उन्नत दुधारू भैसें तराई क्षेत्र से क्रय कराई गयी हैं । योजना की उपयुक्तता संबंधी तकनीकी जानकारी पशु चिकित्साधिकारी से प्राप्त की जा सकती है । आई0आर0डी0पी0 योजनान्तर्गत चयनित लाभार्थियों को विभिन्न कार्यकलापों में तकनीकी कुशलता प्रदान कराने की दृष्टि से उ प्र शासन द्वारा 15 अगस्त 1979 से "ग्रामीण युवक/युवतियों को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण योजना (ट्राइसेम) चलाई गयी है । पशुपालन व्यसाय अपनाने वाले लाभार्थियों को पशुपालन/ डेरी /मुर्गी/सूअर/भेड़/बकरी पालन पर ट्राइसेम योजनान्तर्गत दस दिवसीय निःशुल्क प्रशिक्षण व लाभार्थियों को छात्रवृत्ति उपलब्ध कराते हुए, पशु चिकित्सालयों पर वैज्ञानिक कार्यकलापों (पशुचिकित्सा प्रथम सहायता/पशु पोषण/पशु व्यवस्था व रखरखाव/पशु प्रजनन की आधुनिक तकनीक) पर जनसाधारण सुलभ व रुचिकर प्रशिक्षण प्रदान कराया जाता है । ट्राइसेम योजनान्तर्गत लाभार्थियों का चयन व उनके लिए मानदेय की व्यवस्था विकास खण्ड कार्यालयों द्वारा कराई जाती है ।

जो युवक/युवतियां आई0आर0डी0पी0 योजनान्तर्गत चयनित नहीं हैं और आर्थिक समृद्धि हेतु पशुपालन व्यवसाय अपनाना चाहते हैं उनको पशु क्रय करने हेतु विभिन्न राष्ट्रीयकृत बैंकों से आसान शर्तों पर कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जाता है । ऋण से क्रय किये गये पशुओं का बीमा भी होता है ताकि पशुओं की असमय मृत्यु की दशा में लाभार्थियों को राहत दिलाई जा सके ।

वर्तमान में उ0प्र0 सरकार द्वारा ग्राम्य उत्थान के लिए पं0 दीनदयाल उपाध्याय अन्तोदय योजनान्तर्गत पांच रोजगार पूरक योजनाओं में दो योजनायें (पशु विकास की स्वरोजगार योजना व सघन मिनी डेरी योजना) पशुपालन के क्षेत्र में क्रियान्वित हैं । सघन मिनी डेरी योजना चलाने हेतु शासन द्वारा जनपद अल्मोड़ा का भी चयन हुआ है तथा विकास खण्ड द्वाराहाट भी इस जनपद के अन्य विकासखण्डों के साथ उक्त योजना हेतु

शेष पृष्ठ 32 पर

छोटे-छोटे धंधे कीजिए बेरोजगारी से बचिए

□ योगेश 'नवीन' □

भारत में बेकारी की समस्या एक जटिल मानवीय एवं देशव्यापी समस्या है । शिक्षित या अशिक्षित, पुरुष या महिला, ग्रामीण या शहरी सभी इस समस्या से ग्रस्त हैं । बेकारी की समस्या दिनोंदिन विकराल रूप धारण करती जा रही है जिससे कंगाली, भुखमरी व दुख की सीमा बढ़ती जा रही है । इस समस्या के दुष्परिणामों के कारण निम्न जीवन स्तर, न्यूनतम भोजन, वस्त्र एवं आवास तथा मानसिक दुर्बलता आदि जीवन को भार बना देते हैं । बेरोजगारी की इस समस्या के कई कारण हैं, यथा-जनसंख्या की तीव्र गति से वृद्धि, लघु एवं कुटीर उद्योगों का पतन, फैक्टरी उद्योगों में रोजगार के सीमित होते अवसर, दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली आदि । लेकिन बेरोजगारी के विभिन्न कारणों को गिनाने की बजाय आज आवश्यकता इस बात की है कि इस समस्या का हल किस प्रकार किया जाये, समय-समय पर इस समस्या के निदान हेतु कई सुझाव दिये गये हैं, नये से नये प्रयोग किये जा रहे हैं, मगर हमारे देश में यह समस्या अभी भी ज्यों की त्यों है । भारत की इस बेरोजगारी की समस्या से निपटने के लिए यह जरूरी है कि बेरोजगार लोग कुछ इस तरह के धंधे अपनाएं जिनमें कम पूंजी की आवश्यकता हो तथा उनसे उत्पादित होने वाले माल की आसपास के क्षेत्रों में मांग हो ।

बागवानी

बागवानी में फल, सब्जी, मसालों, फूलों आदि की खेती शामिल की जाती है । हमारे देश के सभी भागों में किसी न किसी प्रकार के फलदार पेड़ पाये जाते हैं जिनको उगाने और फल प्राप्त करने में भी अधिक समय व श्रम की आवश्यकता नहीं होती जैसे केला, अमरूद, पपीता । बेरोजगार लोग फलों के पेड़ लगाकर फल प्राप्त कर बाजार में बेचकर अपनी आजीविका कमा सकते हैं । इसी प्रकार घर के कच्चे आंगन में सब्जी उगाकर या फूल लगाकर भी पैसा कमाया जा सकता है । इनकी पैदावार से बेरोजगारों को अच्छी आय प्राप्त हो सकती है ।

मुर्गीपालन

अंडे और मांस की बढ़ती हुई आवश्यकता व मांग को देखते हुए मुर्गी-पालन भी लाभदायक धंधा सिद्ध हो सकती है । इसमें व्यय बहुत कम और लाभ अधिक है । किन्तु यह धंधा ग्रामीण क्षेत्रों की बजाय शहरों के आसपास अधिक चल सकता है । सरकार भी योजनाओं के माध्यम से ऋण, अनुदान आदि देकर इस उद्योग-धंधे को बढ़ाने का प्रयत्न कर रही है । बेरोजगार व्यक्ति मुर्गी-पालन हेतु सरकार की इन सुविधाओं का लाभ उठाकर अपनी बेरोजगारी दूर कर सकते हैं ।

चटाई, रस्सी आदि बनाना

हमारे देश में रंग-बिरंगी चटाइयों, टोकरियों आदि की मांग निरन्तर बढ़ रही है । इनके निर्माण के लिए कच्चा माल यथा ताड़, खजूर का पत्ता कई प्रकार की घास, बेंत और रंग-धागा आदि की आवश्यकता होती है जो कम मूल्यों में आसपास ही उपलब्ध हो जाती है । इसी प्रकार सन, मूंज, नारियल के रेशे आदि से बनी रस्सियां भी बाजार में खूब बिकती हैं । इस तरह की वस्तुओं का उत्पादन कर बेरोजगार व्यक्ति काफी पैसा कमा सकते हैं । फैशन के कारण चटाई आदि की मांग देश में ही नहीं, विदेशों में भी बढ़ रही है।

सूत कातना

बेरोजगारी से पीड़ित व्यक्ति सूत की कताई करके भी खादी की पूर्ति में वृद्धि कर सकते हैं । सूत का विक्रय कर वे अपनी आय बढ़ा सकते हैं । महात्मा गांधीजी ने चरखे को भारत के दरिद्रों की दशा सुधारने का एकमात्र साधन बताया था । कई फैक्ट्रियाँ व मिलें भी वस्त्र निर्माण के लिए इसे कच्चे माल के रूप में खरीदती हैं ।

पशु पालन

गाय, भैंस, बकरी आदि पशुओं के दूध की आज काफी मांग है । इसके अलावा दूध से निर्मित पदार्थ यथा घी-मक्खन-दही आदि की भी सभी को आवश्यकता होती है । बेरोजगार व्यक्ति पशु पालन व्यवसाय अपना कर अपनी आजीविका कमा सकते हैं । इसके अतिरिक्त भेड़ पालन भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है । ऊन, मांस, चमड़ा आदि भी मनुष्य की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं । बेरोजगार लोग पशु पालन के माध्यम से इन आवश्यकताओं की पूर्ति कर आमदनी कर सकते हैं ।

बांस और बेंत का काम

बांस और बेंत का उपयोग करके मेज, कुर्सी, मूढ़े, टोकरियाँ आदि बनाई जा सकती हैं। इसके लिए कच्चा माल प्रायः आस-पास ही मिल जाता है। कम मूल्य में कच्चा माल प्राप्त कर विभिन्न वस्तुएँ बनाकर ऊँचे दामों में बेची जा सकती हैं और धन कमाया जा सकता है।

बेरोजगारों के लिए और भी कई कार्य है, जिन्हें करके वे अपनी बेरोजगारी मिटा सकते हैं। साबुन बनाना, कागज बनाना, रेशम के कीड़े पालना, मधु-मक्खी पालना, गुड़ या खांडसारी का उत्पादन करना आदि ऐसे धंधे हैं जिन्हें थोड़े से प्रशिक्षण से सीखकर बेरोजगार व्यक्ति कम पूंजी तथा समय व श्रम की बचत करके भी अधिक धन कमा सकते हैं और अपने आप को बेरोजगारी के चंगुल से मुक्त करा सकते हैं।

IV-6/10, न्यू कॉलोनी,
निकट तहसील भवन,
नवलगढ़ (झुन्झुनू-राज.)

(पृष्ठ 30 का शेष)

चयनित है। यह योजना जिला दुग्ध संघ तथा डेरी विभाग द्वारा चलाई जा रही है। इस योजना में दुग्ध समिति ग्रामों में लाभार्थियों का चयन प्रथम होगा। प्रत्येक ग्राम समिति में चार मिनी डेयरी खुलनी हैं। साथ ही साथ जनपद के नगरीय कस्बा क्षेत्रों में प्रति नगर/कस्बा 10-10 मिनी डेरियां नगरीय/कस्बा क्षेत्र के दस कि०मी० में खुलनी हैं जिनमें से पांच वर्ष 1991-92 में तथा शेष पांच वर्ष 1992-93 में खुलेंगी। योजना का वित्तीय विवरण निम्न प्रकार है :–

1. पशु बाड़े के निर्माण हेतु दिया जाने वाला ऋण 9000/- रुपये।
2. पशु क्रय हेतु दिया जाने वाला ऋण (चार दुधारू पशुओं गाय/भैंसों के लिए) 36,000/-रुपये।
3. पशुओं के ढुलान, बीमा तथा चारे हेतु दिया जाने वाला ऋण 3300 रुपये (जिसमें ढुलान हेतु 1000 रुपये, बीमा के लिए 1540 रुपये, चारा हेतु–एक माह के लिए 660 रुपये, दवा के लिए एक माह हेतु 100 रुपये हैं)

उक्त योजनान्तर्गत भैंस अथवा गायें क्रय की जाती हैं तथा धनराशि का 95% बैंक द्वारा तथा 5% दुग्ध संघ द्वारा मार्जिन मनी के रूप में दिया जायेगा। मार्जिन मनी की धनराशि द्वितीय वर्ष में लाभार्थी को वापस करनी पड़ेगी।

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले बेरोजगार युवक पशुपालन व्यवसाय अपनाकर स्थाई परिसम्पत्ति का सृजन कर सकते हैं तथा आर्थिक स्तर ऊंचा कर सकते हैं तथा शासन द्वारा प्रदत्त विभिन्न लाभकारी योजनाओं से लाभान्वित हो सकते हैं।

पशु चिकित्साधिकारी
द्वाराहाट जिला अल्मोड़ा (उ.प्र.)

आशा का प्रभात

□ डॉ० विमला उपाध्याय □

महानगरों की जिंदगी से भला आदमी ऊब न जाए–यही सवाल मेरे मन में चक्कर काटा करता है । जिस गांव में जन्मी, बढ़ी, शिक्षा-दीक्षा पाई, उसका आकर्षण सदैव मुझे बुलाता रहता है । विशेषकर गर्मी की छुट्टियां होते ही मेरा मन रूपी पक्षी अपने गांव राधापुर में ही मंडराने लगता है । आम में बौर आते ही आसपास का वातावरण मह मह करने लगता है । मेरा ध्यान लगा रहता है कि कब मंजरी में टिकोले लगें, कब आम पक जाएं और फिर शुरू हो जाता टिकोलों को नमक मिलाकर 'घुमनी' बनाना और चटखारे लगाकर खाना । हम लोग ग्यारह लड़कियां थीं । कभी कोयल के स्वर-में-स्वर मिलाकर 'कुहू-कुहू' करना, कभी 'डोल डोलिच्या' खेलना, कभी लुकाछिपी का खेल । कितने अच्छे दिन थे । वक्त कैसे कट गया, पता नहीं चला ।

इन्हीं यादों में खोती जा रही थी कि मन ने निश्चय किया–'इस बार की छुट्टी नैहर में बिताई जाए' । फिर क्या था ? तीसरे दिन मैं अपने गांव पहुंच गई । वहां का माहौल देखकर मैं दंग रह गई । बैलों की जगह ट्रैक्टर ने ले ली थी । ट्रैक्टर से ही पानी खींचने, सिंचाई करने, खाद ढोने, कटाई, ओसाई का काम लिया जाता । खेती में क्रांति आ गई थी । गांव की सीमा पर पहुंची ही थी कि मुस्कुराकर रामदीन चाचा ने स्वागत किया–"आ गई बिटिया ! बड़ा अच्छा किया । तुम्हारे शहर में तो मोटरगाड़ी, कार दौड़ती रहती है । खूब सुख है । अपने गांव में भी नई बहार आई है । खूब सुख है । देखो न इस वर्ष एक एकड़ में मुझे दुगना गेहूँ हुआ । अच्छा बीज, अच्छी खाद, सिंचाई की पूरी व्यवस्था रहने से क्या नहीं होता है ? कुछ दिन रहना गांव में। तुम्हारा मन लगेगा बिटिया ।"

मैं मुग्ध होकर सुन रही थी और सोच रही थी कि इसी गांव के उत्थान के लिए महात्मा गांधी आजीवन संघर्ष करते रहे । उनका सपना साकार हो रहा है ।

मैं यात्रा से काफी थक गई थी । इसलिए परिवार के लोगों से मिलकर, खाना खाकर सोने चली गई । मां के कमरे में मेरा बिछावन लगा था । पलक झपकी ही थी कि करुण चीत्कार ने मुझे जगा दिया । मैं उठकर बैठ गई । मेरी माँ समझ गई । उसने मेरी पीठ ठोकते हुए कहा– "सो जाओ बेटी, थक कर आई हो । यहाँ यह सब होता ही रहता है ।"

"क्या होता रहता है माँ ? कौन रो रहा है ? क्या बात है ?"

"दरअसल बात यह है कि झगडू के बेटे को डायन की नजर लग गई है । वह कल से ही चुपचाप निष्चेष्ट पड़ा है ।"

"झगडू चाचा क्या कर रहे हैं माँ ?"

"अरे क्या करेंगे । ओझा गुनी बुलाने में लगे हैं बेचारे । यहाँ वैद्य हकीम थोड़े आते हैं बेटी ।"

मुझे माजरा समझते देर न लगी । मैंने माँ को बताए बिना झगडू के घर के लिए प्रस्थान किया । झगडू चाचा मुझे बेहद प्यार करते थे । मुझे याद है कि ऊँची-से-ऊँची डाली पर वह गिलहरी की तरह चढ़ जाते और पके आम तोड़कर मुझे दिया करते थे । बला की फुर्ती और ताकत थी उनमें । वही झगडू चाचा एक भग्नावशेष की तरह सामने खड़े थे । मैंने प्रणाम किया तो करुणा विगलित स्वर में बोले– "जीती रहो विमला बिटिया । ईश्वर तुम्हें सब सुख दे ।" मैं उनके बेटे की ओर मुखातिब हुई कि चाची दहाड़ मारकर रोने लगी । चाचा अलग चीत्कार करने लगे ।

मैंने उन्हें धीरज बँधाया और पूछा– "इसका इलाज किस डॉक्टर से करवा रहे हैं ?"

"वैद्य हकीम के पास डायन के किये का इलाज थोड़े ही रहता है बिटिया । ओझा गुनी ही कुछ कर सकते हैं । बेटे को भेजा है उन्हें बुलाने के लिए ।"

यह सुनकर मैं दंग रह गई और गांव की बदहाली का राज समझते देर नहीं लगी । मैंने धैर्य और संयम से काम लिया । उन पर तरस आया, जो जमाने से कोसों दूर हैं । वे दया के पात्र हैं । करुणा के अधिकारी हैं ।

मैंने बच्चे के कपाल पर हाथ रखा । वह तवे की तरह तप रहा था । नब्ज टटोली । 102 डिग्री से अधिक बुखार मालूम पड़ा । मैं सोचने लगी– "बच्चा मृत्यु के मुंह में पड़ा है और ये लोग डायन का उपचार कराने की कोशिश में हैं । कितनी बड़ी विडंबना है यह ।" मैं प्रत्यक्ष बोली– "चाचा, देख रहे हैं

कि वह निर्जीव-सा पड़ा है। जल्दी किसी डॉक्टर को बुलाइये अन्यथा अनर्थ हो जायेगा चाचा।"

"तुम पढ़-लिख गई बिटिया, इसीलिए डायन पर विश्वास नहीं करती हो। डायन राक्षसी कितनों का घर तबाह कर चुकी है। उसी के बाण से घायल हुआ है मेरा बेटा। तुम शहर में रहती हो। आधुनिकता की रोशनी में जीती हो। तुम्हें क्या पता डायन क्या होती है।"

"सचमुच वह कुछ नहीं होती चाचा। यह सब आप लोगों का भ्रम है। अंधविश्वास है। अभी आपको दिखाती हूँ कि इलाज से बच्चा भला-चंगा हो जाता है।"

"हर्गिज नहीं, मुझे विश्वास नहीं है बिटिया।"

"आपके विश्वास को तोड़ना और सत्य से सामना कराना मेरा कर्त्तव्य है चाचा।"

मेरी यह आदत रही है सफर पर निकलूँ, तो साथ में दवा की एक छोटी सी पिटारी अवश्य रहेगी। दो बच्चों की माँ हूँ उनकी बीमारी ने ही डॉक्टर बना दिया है। मैं दौड़कर अपने घर गई। वहाँ से कुछ दवाएँ ले आई। आते ही बुखार हटने की दो टिकिया चूरकर पानी में मिलाकर बड़े मुश्किल से उसके गले के नीचे उतारा। एक सुई भी लगा दी और सबकी ओर देखकर बोली– "अब देखिए कमाल! कहाँ की डायन, कहाँ की योगन। बच्चा तुरंत ठीक हो रहा है।"

सचमुच ही कमाल हो गया। निर्जीव सा पड़ा हुआ बच्चा हरकत में आ गया। उसने आँखें खोलीं। पानी के लिए मां को पुकारा। मैंने हिदायत की– "किसी को डॉक्टर बुलाने के लिए भेजिये। तब तक बच्चे को खूब पानी पिलाइये। दो घंटे पर यही टिकिया चूरकर खिला दीजिए।"

उनके घर में भीड़ उमड़ पड़ी थी। इसलिए नहीं कि बच्चे के प्रति करूणा थी कि हमदर्दी थी। इसलिए कि डायन के बाण को मैं कैसे नकार देती हूँ। उनकी झूठी आस्था को कैसे झकझोर देती हूँ। सब मेरी ओर विस्मय से देखने लगे। इसी समय मेरा सहपाठी अजय आ धमका यह समाचार सुनकर कि विमला ने डायन के प्रकोप से पीड़ित को जिला दिया है। अजय पांचवीं कक्षा तक पढ़कर खेती-गृहस्थी में लग गया और मैंने तो भारत की उच्च्य उपाधि पाकर ही दम लिया। फिर भी वह मेरा सहपाठी था।

मैंने अजय से विनम्रतापूर्वक कहा, "तुम साइकिल लेकर शहर चले जाओ और किसी अच्छे डॉक्टर को ले आओ। उसने प्रतिवाद किया– "एक तो ये लोग डॉक्टर को दिखाना नहीं चाहते। यदि डॉक्टर आ भी जाए, तो फीस नहीं देंगे। असमर्थता का रोना रो देंगे।"

"तुम जाओ अजय! फीस मैं भरुंगी और तब तक गांव में रहूँगी, जब तक यह बच्चा खेलने-कूदने न लगे।"

मेरी बात चाचा ने शायद सुन ली थी वे तपाक से बोले– "तुम बिटिया भगवान हो मेरे लिए। तुम जो कहोगी वह भला मैं न करूँ? डॉक्टर को फीस, आने-जाने का खर्च दूंगा बिटिया।

नौ बजे दिन को डॉक्टर आ गए। मैं रात में ठीक से सो नहीं पाई खुशी के मारे। बच्चे को बचाने की खुशी थी। अजय डॉक्टर को वहाँ पहुंचाकर मुझे बुलाने आया। मैं उसके साथ हो गई। चाचा के घर पहुंची तो डॉक्टर बच्चे की जांच कर रहा था। मुझे देखकर मुस्कुराने लगा। मुस्कुराता रहा। मुझे अजीब लगा उसका मुस्कुराना। डॉक्टर ने मेरी मुश्किल को आसान करते हुए कहा– "क्षमा करना विमला! अब मैं जान गया कि इस रोगी की रक्षा करनेवाली कोई और नहीं है, मेरी दोस्त है। तुमने इसका प्रारंभिक इलाज न किया होता, तो यह मेरे आने की प्रतीक्षा भी न कर पाता... और जान लो ऐसे गांवों में 40 से 50 प्रतिशत बच्चे डायन, चोरदत्ता आदि के प्रकोप का शिकार समझकर चिकित्सा नहीं पा सकते और मृत्यु का कौर बनते हैं। तुमने इनकी पुरानी सड़ी आस्थाएं तोड़ी हैं। शुक्रिया।" दिमाग पर बल डालने पर समझ गई थी कि डॉक्टर का नाम अशोक था और उसने इंटर मेरे साथ किया था। मैंने कहा– "चलो आशा का प्रभात तो निकला।"

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
अर्थशास्त्र विभाग,
एस.एस.एल.एन.टी. महिला महाविद्यालय,
धनबाद-826 001

गोपाल रत्न गौतम पोद्दार और उनकी गोशाला

□ गुंजेश्वरी प्रसाद □

यह हैरत की बात नहीं है । हकीकत है । पोद्दार परिवार के एक युवा श्रीगौतम पोद्दार ने पूर्वी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर शहर में गोपालन करके पूरे भारत को बता दिया कि पूर्वी उत्तर प्रदेश में जहां गर्मी के मौसम में भीषण गर्मी पड़ती है और जाड़े के दिनों में कठोर जाड़ा पड़ता है, फ्रीजियन नस्ल की गायों का उचित रख-रखाव करके प्रतिदिन 42 लीटर से 48 लीटर तक दूध लिया जा सकता है और पूरे देश को दूध के क्षेत्र में आत्मनिर्भर ही नहीं स्वीडन और डेनमार्क बनाया जा सकता है । उनके इसी प्रयास पर 16 अक्टूबर 1986 में भारत सरकार के कृषि मंत्रालय की ओर से तत्कालीन कृषि राज्य मन्त्री श्री रामानन्द यादव ने उन्हें गोपाल रत्न की उपाधि से सम्मानित किया और उनके मनोबल को बढ़ाया ।

गोपाल रत्न गौतम पोद्दार को जिस लतिका गाय से श्वेत क्रान्ति के क्षेत्र में भारत सरकार का इतना बड़ा सम्मान मिला वह लतिका अब नहीं रही । लतिका के सन्दर्भ में बस इतना ही जानना समीचीन होगा कि वह पूरी दुनिया की डेढ दो सौ गायों में से एक थी जिसने प्रतिदिन कभी 48 लीटर और कभी 44 लीटर तक दूध दिया और दूध देने वाली गायों के बीच अपना एक अलग रिकार्ड स्थापित किया । गौतम पोद्दार की कामधेनु लतिका का जन्म किसी दूसरे राज्य और किसी दूसरे फार्म में नहीं हुआ था । उसका जन्म श्री पोद्दार की गोशाला में ही हुआ था । अलबत्ता लतिका की मां लखनऊ मिलेट्री फार्म की थी जो 75 प्रतिशत फ्रीजियन और 25 प्रतिशत शाहीवाल नस्ल की थी । वह प्रतिदिन 30 लीटर से 34 लीटर तक दूध देती थी । लतिका भी 87.5 प्रतिशत फ्रीजियन और 12.5 प्रतिशत शाहीवाल नस्ल की थी ।

गौतम पोद्दार की गोशाला

गोरखपुर रेलवे जंक्शन से कोई 4 किलोमीटर दूर शहर के उत्तरी पश्चिमी छोर पर एक मुहल्ला है सूडियां कुआं । यह मुहल्ला गोरखनाथ से पूरब रेलवे के हड़हवा फाटक के करीब है । गोरखपुर नगर महापालिका का सफाई विभाग इस मुहल्ले की ओर उतना ध्यान नहीं देता है जितना गोलघर और गोरखनाथ की ओर देता है ।

गौतम पोद्दार की गोशाला का सन् 1986 से ही काफी महत्व बढ़ गया है । क्या सैलानी, क्या विदेशी, क्या छात्र, क्या नेता, क्या लेखक और पत्रकार जो भी गोरखपुर आता है गोरखनाथ मन्दिर का दर्शन करने के पश्चात् इस गोशाला को तीर्थ की तरह देखता है और मन ही मन में गोपालन के प्रति एक नया उत्साह लेकर जाता है । इस समय श्री पोद्दार की गोशाला में 460 गायें हैं जिनमें 300 गायें इस समय दूध दे रही हैं । इस गोशाला में एक भी गाय ऐसी नहीं है जो 20 लीटर से कम दूध दे । 30 गायें ऐसी हैं जो रोजाना 37 से 38 लीटर तक दूध देती हैं ।

इन सभी गायों को मशीन से दूहा जाता है । इतनी ज्यादा दूध देने वाली गायों को आदमियों द्वारा दुहा भी तो नहीं जा सकता है । वैसे इन गायों की देखभाल के लिए 40 आदमी रखे गये हैं । औसतन प्रति 10 गाय पर एक आदमी लगा हुआ है । किन्तु जो लोग गायों की देखभाल में लगे हुए हैं वे लोग इन गायों को समय से नहलाते हैं और समय से दाना चारा भूसा वगैरह देते हैं तथा गौशाला की सफाई रखते हैं । श्री हरिश्चन्द्र इस गोशाला के प्रधान प्रबन्धक हैं और वह पिछले कई वर्षों से गोशाला का काम देख रहे हैं । उन्हें इस क्षेत्र में काफी अनुभव हो चुका है । वह जानते हैं कि 400 गायों में किस गाय को कितना दाना और कितना चारा भूसा चाहिए । इसके साथ ही उन्हें बछड़ों के रख-रखाव की भी पूरी जानकारी है । पशुओं में होने वाली बीमारी और उसके उपचार की विधियों से भी वह परिचित हैं । इसके अलावा गोशाला के काम में जो 40 लोग लगे हुए हैं उन्हें भी गायों और बछड़ों का रख-रखाव का पूरा अनुभव है । श्री गौतम पोद्दार को अपने इन आदमियों के काम करने के तौर तरीकों पर पूरा विश्वास और भरोसा है ।

श्री गौतम पोद्दार ने बातचीत के दौरान बताया "पहले मैं गोशाला के काम में लगभग 4 घन्टे का समय दिया करता था लेकिन अब मैं 2 घन्टा ही समय दे पाता हूं । ऐसा इसलिए है कि मेरे जितने भी आदमी गोशाला के काम में लगे हुए हैं सभी ट्रेन्ड हो चुके हैं और उन लोगों की ओर से गोसेवा में

किसी प्रकार की कोताही नहीं होती है। आगे श्री गौतम पोद्दार ने यह भी बताया, "सन् 1986 में जब मुझे गोपाल रत्न की उपाधि से सम्मानित किया गया उस समय मेरी गोशाला और गायों के रख-रखाव का प्रबन्ध बहुत अच्छा नहीं था। फ्रीजियन नस्ल की गायों को गर्मी और बरसात के महीनों में ज्यादा कष्ट उठाना पड़ता था। मक्खियां और दूसरे प्रकार के कीटों के आक्रमण से गायें परेशान रहती थीं। गर्मी के प्रभाव से उनकी दूध देने की क्षमता में गिरावट आ जाती थी और इस गिरावट को वे पुनः अर्जित नहीं कर पाती थीं। अब मैंने क्लाइमेट कन्ट्रोल का प्रबन्ध करवा दिया है।"

क्लाइमेट कन्ट्रोल के विषय में श्री गौतम पोद्दार ने बताया, "इससे गायों और बछड़ों पर मौसम का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और इसका परिणाम यह होगा कि गायों के दूध देने की क्षमता में वृद्धि होगी। जो गाय इस समय 37-38 लीटर दूध दे रही हैं, वे अगले वर्ष 44-45 लीटर दूध देंगी।"

गौतम पोद्दार की गोपालन में रुचि

श्री गौतम पोद्दार ने गोपालन के प्रति अपनी रुचि पर बातचीत करते हुए बताया, बचपन से ही मुझे जानवरों को पालने का शौक रहा है वैसे मेरे दादा स्वामी श्री महाबीर प्रसाद पोद्दार एक गान्धीवादी कार्यकर्ता थे। स्वतन्त्रता संग्राम में वह अपने को समर्पित कर चुके थे। राजनीति में गहरी रुचि लेने के बावजूद उन्होंने कूड़ाघाट में जहां उनका 300 एकड़ का फार्म था, 300 देशी नस्ल की गायों और बैलों को पाल रखा था। मैं इस फार्म पर बचपन में आया जाया करता था। मेरे पिता स्व0 श्री परमानन्द पोद्दार को गोपालन में कोई रुचि नहीं थी लेकिन वह गोपालन के विरोधी भी नहीं थे। वैसे जब मैं बिड़ला विद्या मन्दिर नैनीताल के पब्लिक स्कूल से पढ़कर गोरखपुर विश्वविद्यालय में आया तो मेरा जानवरों के प्रति प्रेम जागा। सन् 1969 में मध्यकालीन भारत में एम.ए. करने के बाद मैं अपना कारोबार सम्भालने लगा। सन् 1973 में लखनऊ के मिलिट्री फार्म से फ्रीजियन नस्ल की दो गायें मुझे मिलीं। इन दोनों गायों ने अपने पहले प्रसव में 16 लीटर से 18 लीटर तक प्रतिदिन के हिसाब से दूध दिया। इन गायों की दूध देने की क्षमता देख कर मेरा हौसला बढ़ा और जब मेरी रुचि इस ओर बढ़ी तो मेरी मां और बुआ ने इसका विरोध किया और कहा कि यह घाटे का व्यवसाय है। ऐसा कह कर हतोत्साहित किया मगर पिताजी ने कुछ नहीं कहा। सन् 1974 से गायों की संख्या बढ़ती गयी और मेरी रुचि भी बढ़ती गयी।

आगे श्री पोद्दार ने कहा, "यदि कोई व्यक्ति निष्ठा, लगन और समर्पण भाव से कोई व्यवसाय करे तो निश्चित रूप से वह अपने व्यवसाय में सफल हो जाता है। सन् 1974 में जब मैंने दो फ्रीजियन गायों से अपना व्यवसाय शुरू किया और गायों की दूध देने की क्षमता को देख कर उत्साहित हुआ तो धीरे-धीरे फ्रीजियन गायों की संख्या बढ़ गयी। सन् 1986 तक मेरे पास 260 गायें हो गयीं और फिर लतिका जैसी गाय ने तो मेरा उत्साहवर्द्धन करके मुझे गोपालन के साथ जोड़ दिया। इस समय कोई 70 क्विंटल दूध मेरी गोशाला से निकल रहा है और मेरा सारा दूध गोरखपुर शहर में खप जाता है। जो लोग मेरे यहां से दूध लेते हैं उन्हें मेरी फर्म में पहले अपना नाम अंकित कराना पड़ता है। उन्हें फर्म की ओर से कार्ड दिया जाता है। कार्ड पर ही दूध का वितरण कार्य होता है।

श्री पोद्दार की गोशाला में, जहां 460 गायें हैं, अधिकांश काम गोशाला में लगे हुए आदमी करते हैं लेकिन रोजाना कम से कम दो घन्टा समय श्री गौतम पोद्दार स्वयं अपनी गोशाला के लिए निकाल लेते हैं और गायों के बीच देते हैं। उन्होंने हिसार में 1 माह रहकर पशुओं की बीमारी और गर्भाधान करने के सभी तौर तरीकों की ट्रेनिंग ली है और फिर वह अपनी गोशाला में काम करते-करते वह इतने अनुभवी हो चुके हैं कि किस बीमारी में कौन सी दवा कारगर होगी सब जानते हैं।

गायों की खुराक के विषय में चर्चा करते हुए वह कहते हैं, मेरी सभी गायें 365 दिन तक दूध दे सकती हैं मगर 305 दिन तक दूध दुहा जाता है। इसके बाद गायों का दूध सुखा दिया जाता है। जहां तक गायों की खुराक का प्रश्न है बछड़ों और गायों की उम्र तथा क्षमता के अनुसार उन्हें खुराक दिया जाता है। मेरी गोशाला में जो गायें 30 लीटर से ज्यादा दूध देती हैं उन्हें प्रतिदिन 35 कि.ग्रा. हरा चारा, 1 से 2 कि.ग्रा. भूसा, 2 कि.ग्रा. चना, 6 कि.ग्रा. साइलेज और 13 कि.ग्रा. दाना दिया जाता है। जाड़े में गायों को 8 से 10 कि.ग्रा. काली गाजर भी दी जाती है।

श्वेत क्रान्ति के प्रति शासन की उदासीनता

श्री गौतम पोद्दार ने बहुत ही दुखित होकर शासन केरवैये की स्वस्थ आलोचना करते हुए कहा, "कृषि विभाग के वैज्ञानिक गेहूं, धान, उड़द, चना, मटर, अरहर और अन्य फसलों के विषय में शोध करते हैं और अधिक उत्पादन देने वाले बीजों को पैदा करते हैं मगर मवेशियों के चारे के बीजों के विषय में कोई शोध कार्य नहीं हो रहा है। मवेशियों को चारा देने

वाले वही पुराने बीज आज भी चले आ रहे हैं। पहले तो मैं सितम्बर के महीने में अपनी गायों को हरा चारा नहीं दे पाता था लेकिन अब मैंने ऐसा इन्तजाम कर लिया है कि साल भर तक गायों को हरा चारा उपलब्ध हो जाता है। कृषि विभाग को इस ओर ध्यान देकर अधिक चारा और पौष्टिकता प्रदान करने वाले बीजों के ऊपर शोध करना जरूरी है। हरे चारे के अभाव में दुधारू जानवरों में दूध देने की क्षमता गिर जाती है। शासन को इस मूल विषय पर ध्यान देना चाहिए।

कृषि क्षेत्र में लगे हुए किसानों और दूध पैदा करने वालों को प्रोत्साहित करने के लिए कोई समारोह नहीं होता है। सन् 1986 के बाद से गोपाल रत्न की उपाधि देना भी बन्द हो गया। सरकार की इस उपेक्षापूर्ण नीति से कृषि कार्य में लगे हुए लोगों के मनोबल पर आघात पहुंच रहा है। कृषि क्षेत्र को प्रोत्साहित करने के लिए भव्य समारोहों का आयोजन करके लोगों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

भविष्य की योजना

श्री गौतम पोद्दार ने अपनी गौशाला के विकास के सन्दर्भ में ही नहीं अपितु पूरे देश में श्वेत क्रान्ति के प्रचार हेतु कुछ योजनायें बनायी हैं। उनका कहना है, भारत सरकार अमेरिका और कनाडा से अति हिमकृत वीर्य का आयात करती है। मैं भी अपनी गोशाला के लिए विदेश से ही हिमकृत वीर्य का आयात करता रहा हूं। मगर अब हिमकृत वीर्य का आयात नहीं करूंगा। अपने यहां ज्यादा दूध देने वाली गायें हैं उनसे अच्छे नस्ल के साडों को तैयार करूंगा और ऐसे उच्च नस्ल के सांडों को मैं सरकार को नस्ल सुधार के लिए दूंगा। इस समय शासन के पास जो सांड हैं उनकी नस्लें ऐसी नहीं हैं कि उनकी बछिया से 20 लीटर से ज्यादा दूध लिया जा सके। इसके आगे श्री पोद्दार ने यह भी कहा, "मैं अपने यहां हिमकृत वीर्य भी तैयार करने जा रहा हूं और इस हिमकृत वीर्य को शासन को दूंगा मेरे यहां पवन नाम का एक सांड़ है और इससे 30 बछिया हैं जो रोजाना 25 लीटर से ज्यादा दूध दे रही हैं। अगर पवन जैसे सांड़ शासन के पास हों तो 4-5 सालों में पूरे देश में श्वेत क्रान्ति का नारा फलीभूत हो सकता है। देश दूध के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो सकता है। इतना ही नहीं मेरी एक योजना और है और वह यह है कि मैं अच्छी गायों के भ्रूण का प्रतिरोपण दूसरी गायों में करा कर उच्च नस्ल की गायों को बढ़ाने की योजना पर अमल कर रहा हूं।

श्री गौतम पोद्दार ने अपनी गोशाला की मुझे सैर करायी, अपनी रुचि के विषय में जानकारी दी, और देश को दूध के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने की योजना पर प्रकाश डाला। उन्होंने विश्वास प्रकट किया कि वह इस कार्य में अवश्य ही सफल होंगे।

कौड़ीराम
गोरखपुर

नवीनतम तकनीकी विकास का लाभ ग्रामीण जनता तक पहुंचाना होगा

☐ ललन कुमार प्रसाद ☐

विज्ञान एवं तकनीकी विकास से आधुनिक समाज अत्यन्त लाभान्वित हुआ है। पिछले कुछ दशकों में कृषि-विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, अन्तरिक्ष विज्ञान, परमाणु विज्ञान और इलेक्ट्रोनिकी में हुए तीव्र विकास का लाभ जन-जन तक पहुंचा है। कल तक आदमी के लिए जो स्वप्न था, आज विज्ञान के माध्यम से सच्चाई में परिवर्तित हो गया है। वास्तव में विज्ञान आधुनिक जीवन के लिए कल्पवृक्ष साबित हुआ है।

पिछले 50 वर्षों के हमारे जीवन में काफी सुधार आया है यानि हमारा जीवन स्तर काफी ऊँचा उठा है। आदमी पक्षियों की तरह आकाश में उड़ रहे हैं और मछलियों की तरह सागर में तैर रहे हैं। मनुष्य की सुविधा के लिए नित नये सामान जुटाये जा रहे हैं। आज उच्च आय वर्ग वाले वातानुकूलित मकानों मे रहने लगे हैं। वे कार और यहां तक कि व्यक्तिगत कम्प्यूटर भी रखने लगे हैं। मध्यवर्ग के यहाँ टेलीविजन, स्कूटर और फ्रिज पाया जाना आज आम बात हो गयी है। आजकल गैस के चूल्हे और प्रेशर कुकर निम्न आय वर्ग वालों के घरों में भी देखे जा सकते हैं। कृत्रिम वस्त्रों के क्षेत्र में तो क्रान्ति सी आ गयी है गरीब आदमी भी टेरीकॉट और टेरीलीन जैसे कृत्रिम वस्त्रों को पहने देखा जा सकता है। रेडियो, साइकिल और घड़ियां घर-घर की शान बन गयी हैं। पूरे देश में सड़कों और रेल लाइनों का जाल सा बिछ गया है। फलस्वरूप यातायात अत्यन्त सरल और सुगम हो गया है तथा स्थान-स्थान के बीच की दूरियां सिमटी प्रतीत होने लगी हैं। पूरे देश में रेडियो और दूरदर्शन ट्रान्समीटरों तथा टेलीफोन का जाल सा फैल गया है अर्थात हमारी संचार व्यवस्था इतनी विकसित हो गयी है कि घर बैठे मिनटों में हम हजारों मील दूर बैठे लोगों से संचार संबंध स्थापित कर लेते हैं। मात्र टेलीफोन का डायल घुमाकर देश के एक राज्य का आदमी दूसरे राज्य के आदमी से वार्तालाप करने लगता है।

फिर भी यह बड़े दु:ख की बात है कि विज्ञान में तेजी से प्रगति करने के बावजूद इसका लाभ पूरे समाज को नहीं मिल पा रहा है। धनी लोग वैज्ञानिक साधनों का उपयोग कर विलासी एवं आरामपरस्त हो गये हैं और गरीब लोग अपने पुराने तौर-तरीकों पर ही चलने को मजबूर हैं अर्थात् अमीर और गरीब के बीच का अन्तर घटा नहीं बढ़ा ही है। ऐसा जीवन के हर क्षेत्र में देखने को मिल रहा है। गांव के केवल धनी किसान ही ट्रैक्टर खरीदने, विद्युत-चालित नलकूप लगवाने तथा अन्य आधुनिक कृषि संयंत्रों का खर्च वहन करने में समर्थ हैं। रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशी दवाओं के खर्च का वहन भी धनी किसान ही कर पाते हैं। इससे स्पष्ट है कि वैज्ञानिक विकास का लाभ धनी किसानों को ही मिल पा रहा है और गरीब किसान इससे वंचित रह जाते हैं।

फिर गरीब किसान धन के अभाव में वैज्ञानिक विधियों को अपना कर अपने कृषि उत्पादनों को एक लम्बे समय तक सुरक्षित नहीं रख सकते। फलस्वरूप उन्हें अपने कृषि उत्पादनों को बहुत कम मूल्य पर बेचना पड़ता है जबकि धनी किसान और बिचौलिये गरीब किसानों के विभिन्न कृषि उत्पादनों को बहुत सस्ते दामों पर खरीदकर वैज्ञानिक विधियों द्वारा अधिक दिनों तक सुरक्षित रखते हैं और महंगे दामों पर बेचते हैं। इस तरह विज्ञान का लाभ धनी किसानों को ही मिल पाता है, गरीब किसानों को नहीं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे कृषि वैज्ञानिकों ने खाद्यान्नों का उत्पादन 5 करोड़ टन से बढ़ाकर 15 करोड़ टन कर दिया है। अनाज की यह वृद्धि जनसंख्या-वृद्धि की दर से कहीं कम है। इस बल पर हम तीन-चार वर्षों तक निरन्तर पड़ रहे अकाल का सामना कर पाये हैं। हम अपने आपको खाद्यान्न उत्पादन में न केवल आत्मनिर्भर होने बल्कि अनाज की अधिकता का दावा भी करते हैं और खाद्यान्न का निर्यात भी करते हैं। परन्तु हमारा खाद्यान्न निर्यात करने का दावा एक मायने में बिल्कुल खोखला है। यह ठीक है कि कृषि उत्पादन में शानदार वृद्धि हुई है फिर भी अनाज की अधिकता इतनी नहीं है कि उसका निर्यात किया जा सके। सच्चाई तो यह है कि आज भी गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले 20 करोड़ देशवासी कुपोषण के शिकार हैं। निर्यात के लिए जो अनाज हमें अधिकता में दिखाई देता है, वह वास्तव में हमारे देश की जनता का पेट भरने के पश्चात् नहीं बचा है, बल्कि गरीबी रेखा के नीचे की जनता का एक

बड़ा वर्ग, जो महंगाई के कारण दो वक्त अपना पेट नहीं भर पाता, उसकी वजह से बच जाता है । यह कैसी विडम्बना है कि जिस देश के लाखों लोग कुपोषण के शिकार हो रहे हों, दो वक्त की रोटी भी जहाँ लोगों को नहीं मिल पाती हो, वही देश आलू, प्याज, फल, सब्जियाँ, मांस और मछली के निर्यात की होड़ में लगा है ।

चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में अतिआधुनिक कैट-स्कैन, कृत्रिम वाल्व, गुर्दा प्रत्यारोपण, लिथोट्रिप्सी और प्लास्टिक सर्जरी का उपयोग धड़ल्ले से हो रहा है । लेसर किरणों के जरिये शरीर पर बड़े-से-बड़े एवं नाजुक आपरेशन रोगी को बिना कष्ट पहुंचाये मिनटों में किये जा रहे हैं । नयी-नयी आधुनिक औषधियों एवं चिकित्सा उपकरणों का उपयोग हो रहा है । स्कैनर के द्वारा बिना चीर फाड़ के मस्तिष्क सहित पूरे शरीर के अन्दर झांकना संभव हो गया है । फलस्वरूप मरते को नया जीवन मिला है । लेकिन इस अत्यधिक विकसित चिकित्सा विज्ञान का लाभ निम्नवर्गीय एवं गरीब आदमी को नहीं मिल पा रहा है । विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत के लगभग 80 प्रतिशत लोग आधुनिक दवाइयों से वंचित रह जाते हैं । कम आय वाले देशों के अत्यधिक गरीब क्षेत्रों के 50 प्रतिशत नवजात शिशु उचित दवाइयों के अभाव में जन्म के प्रथम वर्ष में ही दम तोड़ देते हैं ।

आज एक से बढ़कर एक प्राकृतिक एवं कृत्रिम गरम कपड़े बाजार में उपलब्ध हैं । ये कपड़े जितने गरम हैं, उतने ही आरामदेय और टिकाऊ भी । परन्तु इसका लाभ धनी वर्ग और कुछ संख्या में मध्य वर्ग के लोग ही उठा पाते हैं । धनी वर्ग के एक-एक व्यक्ति के पास सैकड़ों कपड़े हैं और वह भी एक से बढ़कर एक । वहीं गरीब लोगों के पास तन ढकने के लिए भी कपड़ों का अभाव है । यही कारण है कि हमारे देश में जाड़े दिनों में आज भी प्रतिवर्ष सैकड़ों ग्रामीण किसानों की मृत्यु ठंड से हो जाती है । इस तरह हम पाते हैं कि वैज्ञानिक उन्नति का लाभ केवल धनी लोग ही उठा पा रहे हैं और गरीब लोग इससे वंचित रह जाते हैं अर्थात् धनी और गरीब के बीच की खाई पटने के बजाय और गहरी होती जा रही है ।

कम्प्यूटरीकरण के फलस्वरूप लोगों को काफी सुविधा पहुंच रही है । देश के कुछ बड़े-बड़े रेलवे स्टेशनों पर कम्प्यूटर द्वारा आरक्षण होने से यात्रियों को आसानी से शीघ्र आरक्षण टिकट मिल जाते हैं । कम्प्यूटर ने ढेर सारे कठिन से कठिन कार्यों को एकदम आसान बना दिया है । इसकी मदद से किया गया कार्य सही, साफ सुथरा और उच्च कोटि का होता है । जीवन के अनेक क्षेत्रों में कम्प्यूटर के इस्तेमाल से लोगों को काफी लाभ पहुंच रहा है । लेकिन इसके चलते बहुत बड़ी हानि भी पहुंच रही है और वह है बेरोजगारी में बढ़ोतरी । जिस कार्य को हजारों आदमी मिलकर कर सकते हैं, उस काम को एक अकेला कम्प्यूटर कुशलतापूर्वक कर देता है । आधुनिक विज्ञान की एक और महत्वपूर्ण देन है "रोबोट" यानी 'यंत्र मानव' । कमाल की चीज है यह । वास्कवैगन कार फैक्ट्री में एक हजार से अधिक रोबोट काम करते हैं । उस फैक्ट्री के मैनेजर के अनुसार "रोबोटों पर धूल, धूप, गर्मी, सर्दी, शोर इत्यादि का कोई असर नहीं होता । न ही वे काम से घबराते हैं, न बीमार पड़ते हैं, न अच्छे वेतन की मांग करते हैं और न अच्छे रहन-सहन के लिए हड़ताल करते हैं । उनका काम आदमी के मुकाबले अधिक सही होता है । परन्तु ये रोबोट, कम्प्यूटर इत्यादि ऐसे वैज्ञानिक दैत्य हैं जो हजार-हजार लोगों की रोजी-रोटी क्षण भर में हड़प कर जाते हैं । इस तरह विज्ञान श्रमिकों को लगातार बेरोजगार बना रहा है । यह ठीक है कि विज्ञान के इस देन से अनेक क्षेत्रों में उत्पादन काफी बढ़ा है और कुछ वस्तुओं की कीमतें भी घटी हैं, किन्तु इसने श्रमिकों को बेरोजगार कर दिया है, जिससे अमीर और गरीब के बीच की असमानता बढ़ी है । वैसे तो विज्ञान से उत्पन्न बेरोजगारी का असर विकसित देशों में भी हुआ है, लेकिन विकासशील देशों में इसका असर बहुत अधिक पड़ा है ।

निस्सन्देह विज्ञान के विकास ने मानव को गरीबी और पिछड़ेपन से मुक्त होने के लिए सशक्त अस्त्र प्रदान किये हैं । फलस्वरूप विश्व में विज्ञान प्रौद्योगिकी का जितना उपयोग आज हो रहा है, उतना पहले कभी नहीं था । परन्तु विडम्बना तो यह है कि विश्व में मानव-विनाश के लिए किये गये वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी के विकास पर खर्च मानव प्रेम पर बढ़ावा देने वाले विकास से कहीं अधिक है । फलस्वरूप आज समाज में जितना लालच, घृणा और हिंसा व्याप्त है, उतना मानव इतिहास में पहले कभी नहीं था । इस शताब्दी में पहले दो विश्व महायुद्ध हुए और अब सारी दुनिया तीसरे विश्व महायुद्ध के कगार पर खड़ी है । इतना ही नहीं, अब नशीली दवाओं के सेवन, एड्स, सामाजिक हिंसा और अपहरण जैसे घृणित कृत्यों का प्रकोप भी तेजी से फैल रहा है । ये सब विज्ञान के विकास का दुरूपयोग नहीं तो और क्या है ? इस दुखद एवं भयावह स्थिति से निबटने की जिम्मेदारी केवल वैज्ञानिक समुदाय और वैज्ञानिक संस्थाओं

पर नहीं थोपी जा सकती । इसके लिए असली जिम्मेदार हमारी सरकार और हमारे राजनीतिज्ञ हैं । हमें सदा याद रखना चाहिए कि मनुष्य का अन्य मनुष्यों तथा समस्त प्राणियों के विषय में सोचना ही मानव-मूल्यों का आधार है । इस शताब्दी के महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आईंस्टाइन ने शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में कहा था "मानव के महत्वपूर्ण कार्यों में नैतिक विकास के प्रयास का स्थान प्रथम है । हमारा अन्तःसंतुलन तथा अस्तित्व इसी पर आधारित है । हमारे कार्यों की नैतिकता ही जीवन को सुन्दरता और सम्मान प्रदान कर सकती है । इसी को प्रेरक बल बनाना व साफ-सुथरी चेतना लाना ही शिक्षा का सर्वप्रथम कार्य है । काल्पनिकता तथा प्रभुत्व को नैतिकता का आधार नहीं बनने देना चाहिए ।"

अन्त में हम कहना चाहेंगे कि विज्ञान के विकास ने सभी प्राणियों के लिए भौतिक स्वर्ग के निर्माण की शक्ति अवश्य प्रदान की है । हमारे रहन-सहन का स्तर काफी ऊंचा उठा है । दिन प्रतिदिन के कार्यों में हम काफी कुशल एवं गतिशील दिखने लगे हैं । परन्तु नैतिक रूप से हमारे सोचने समझने का स्तर काफी नीचे गिरा है । मानवता की दृष्टि से हम निरन्तर खोखले होते जा रहे हैं । फलतः आज के वैज्ञानिक युग में हमारा आधुनिक जीवन भौतिक रूप से सारी-सुख-सुविधाओं को प्राप्त करके भी नाटकीय बन गया है । ऊपर से हमारे बीच की दूरी बिल्कुल मिट सी गयी है, किन्तु भीतर ही भीतर हम एक-दूसरे से काफी दूर हो गये हैं ।

मेरी दृष्टि में भीषण सामाजिक असमानता और गलत शिक्षा इसके मुख्य कारण हैं । विज्ञान की उन्नति से अमीरों की तो उन्नति हुई है, परन्तु इसका लाभ गरीबों, खासकर ग्रामीण किसानों और मजदूरों तक नहीं पहुंच पा रहा है । हमारे गरीब ग्रामीण किसान तथा मजदूर और गरीब हो गये हैं । हमारी वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा काफी विकसित हुई हैं, लेकिन नैतिक शिक्षा का जबर्दस्त ह्रास हुआ है । परिणामस्वरूप हम बातें तो ज्ञानी पुरुषों की तरह करते हैं, लेकिन जीते जानवरों से भी बदतर हैं । नैतिक दृष्टि से हमारा समाज कुसंस्कारियों की जमात सा प्रतीत होता है । दिन-प्रतिदिन भ्रष्टाचार और अपराध में बढ़ोतरी होती जा रही है । इसलिए आवश्यक यह है कि जन-सामान्य का आर्थिक स्तर ऊपर उठाया जाये और नवीनतम तकनीकी के विकास का लाभ गरीब ग्रामीण जनता तक पहुंचाया जाये । साथ ही उन्हें साफ-सुथरी एवं प्रेरक नैतिक शिक्षा भी दी जाये, जिससे वैज्ञानिक विकास का लाभ पूरे समाज को सहजता से प्राप्त हो सके । ऐसा करके ही हम अपने आपसी सम्बन्ध मधुर बना सकते हैं और विज्ञान से प्राप्त सुख-सुविधा का वास्तविक आनन्द उठा सकते हैं ।

शिव मन्दिर के बगल में
बाकरगंज बजाजा गली
बांकीपुर, पटना-800 004

पशुपालन एवं दुग्ध विकास

□ डॉ० गजेन्द्र पाल सिंह □

किसी भी कृषि प्रधान देश या प्रदेश के समृद्धि व विकास में पशुधन की बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका पायी जाती है। एक ओर जहां बैल, ऊंट, घोड़े व खच्चर भार ढोकर व हल खींचकर करोड़ों, करोड़ों हॉर्स पावर ऊर्जा की बचत करते हैं, वहीं दूसरी तरफ गाय, भैंस, भेड़, बकरी, मुर्गी व सूअरों द्वारा पौष्टिक आहार के रूप में दूध, अण्डा व मांस उपलब्ध होता है। यही नहीं औद्योगिक विकास में मुख्य रूप से चमड़ा व ऊन उद्योग के लिए आवश्यक कच्चे माल की आपूर्ति भी पशुधन के द्वारा ही होती है, तात्पर्य यह कि कृषि व औद्योगिक विकास के साथ ही साथ खाद्य समस्या के निराकरण में भी पशुधन की बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका पायी जाती है। विगत वर्षों के आंकड़ों व अनुभवों से यह पुष्ट हो चुका है कि कृषि की अपेक्षा पशुपालन द्वारा अधिक आय प्राप्त होती है। अतः ऐसी परिस्थिति में यह परमावश्यक है कि पशुधन के विकास व संरक्षण की दिशा में अधिक प्रभावी कार्यक्रमों का संचालन उच्च प्राथमिकता के आधार पर किया जाय।

उत्तर प्रदेश देश का सर्वाधिक जनसंख्या वाला प्रदेश है, जिसमें 1991 की जनगणना के अनुसार 13.87 करोड़ जनसंख्या निवास कर रही है। प्रदेश का भौगोलिक क्षेत्रफल 2,94,416 वर्ग कि.मी. है, जो देश के समस्त भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 8.9 प्रतिशत है जबकि देश की जनसंख्या में प्रदेश की जनसंख्या का 16.5 प्रतिशत है। अतः इस के अतिरिक्त जनसंख्या के भरण पोषण, समृद्धि व कल्याण के लिए यह आवश्यक है कि प्रदेश में सघन रूप से समग्र विकास (कृषि व उद्योग) की दिशा में चिन्तन व विकास कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन की व्यवस्था की जाए।

भारत में पशुधन की संख्या विश्व में सबसे अधिक है इसके पश्चात् चीन को दूसरा स्थान प्राप्त है। पशुओं की संख्या सबसे अधिक होते हुए भी हमारे देश की राष्ट्रीय आय में पशुधन से मिलने वाली आय का अनुपात लगभग 18 प्रतिशत है जबकि डेनमार्क, फ्रान्स, इंग्लैण्ड, स्वीडन व अमेरिका में क्रमशः, 80, 62, 75, 76 व 60 प्रतिशत है। विश्व अर्थव्यवस्था में पशुधन के संदर्भ में भारत की जो स्थिति है ठीक वही स्थिति देश में उत्तर प्रदेश की है। उत्तर प्रदेश में भी पशुधन की संख्या सभी प्रदेशों की तुलना में सर्वाधिक है, पर पशुधन की दयनीय स्थिति के कारण कृषि विकास व राष्ट्रीय आय में इनका योगदान अपेक्षित मात्रा में नहीं हो पा रहा है। प्रदेश सरकार ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास व किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए पशुधन विकास की दिशा में विशेष रूप से सचेष्ट है।

पशु स्वास्थ्य, चिकित्सा एवं प्रजनन

प्रदेश के विकास में पशुधन के महत्व को देखते हुए पहली बार उत्तर प्रदेश सरकार ने पशुपालन को कृषि के समान उच्च प्राथमिकता प्रदान की है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में जहां पशुधन विकास पर मात्र 71 करोड़ रुपये व्यय किये गये वहीं आठवीं योजना में पशुधन विकास पर 205 करोड़ रुपये व्यय के लक्ष्य को स्वीकार किया गया है। दूध, घी, अण्डा व मांस की अधिकाधिक उपलब्धता के लिए यह आवश्यक है कि हमारे पशु पूर्ण रूप से स्वस्थ, निरोग व अच्छी नस्ल के हों। पशुओं को स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधायें उपलब्ध कराने हेतु 1990 तक प्रदेश में 1642 पशु चिकित्सालय, 2896 पशु सेवा केन्द्र व 258 डी ग्रेड पशु चिकित्सालय कार्यरत थे। वर्ष 1991-92 में पशुधन विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु 61 और नये पशु चिकित्सालयों की स्थापना की गयी है, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में निजी पशु चिकित्सालयों को खोलने और प्रवृत्ति को प्रोत्साहित देने के लिए प्रति चिकित्सालय 25,000 रुपये का साज सामान व 2,500 रुपये की प्रतिमाह आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है।

प्रदेश में उन्नत प्रजनन द्वारा दुग्ध उत्पादन में अधिकाधिक वृद्धि लाने के लिए कृत्रिम गर्भाधान द्वारा संकर प्रजातियों के विकास का कार्य तेजी से चलाया जा रहा है। उत्तम गुण वाले सांडों व भैंसों हेतु प्रदेश में 6 अतिहिमीकृत वीर्य उत्पादन केन्द्र क्रमशः लखनऊ, देहरादून, अल्मोड़ा, खीरी, गाजियाबाद व बाराबंकी व 20 तरल नत्रजन उत्पादन संयंत्र कार्यरत हैं। प्रदेश में उन्नत प्रजनन सुविधाओं को प्रत्येक गांव सभा स्तर तक पहुंचाने के लिये एक नई योजना प्रारम्भ की गई है, जिसमें ग्रामीण युवकों को ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत कृत्रिम गर्भाधान

विधि का प्रशिक्षण दिया जा रहा है और प्रशिक्षित युवकों को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप उपकरण उपलब्ध कराकर कृत्रिम गर्भाधान की सुविधाओं में वृद्धि की जा रही है ।

भेड़, बकरी व शूकर विकास कार्यक्रम

प्रदेश में ऊन उद्योग के विकास हेतु आवश्यक कच्चे माल की आपूर्ति मुख्य रूप से भेड़ों द्वारा होती है । भेड़ों के नस्ल सुधार व अच्छी श्रेणी के ऊन उत्पादन के लिए उत्तरांचल में दो नये अंगोरा शशक प्रक्षेत्रो की स्थापना के साथ ही इस क्षेत्र में कार्यरत 4 प्रक्षेत्रों का सुदृढ़ीकरण व नवीनीकरण किया गया है । वर्तमान समय में प्रदेश में 19 भेड़ प्रक्षेत्र कार्यरत हैं, जहां पर उन्नत विदेशी नस्ल के भेड़ों द्वारा सफलता पूर्वक प्रजनन कार्य किया जा रहा है । साथ ही प्रदेश में 299 भेड़ व ऊन प्रसार केन्द्र कार्यरत हैं, जहां पर भेड़ों से सम्बन्धित चिकित्सा, रोग नियंत्रण व प्रजनन सम्बन्धी सुविधायें भी उपलब्ध हैं ।

गरीब वर्ग के लोगों के जीवन स्तर के सुधार में बकरी पालन की भी बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका पायी जाती है । बकरी निर्धन की धेनु है, इसी भावना से प्रदेश में जमुनापारी व बर्बरी प्रजाति की बकरियों के विकास का कार्यक्रम चल रहा है । वर्तमान में पूरे प्रदेश में 1056 पशु चिकित्सालयों पर उन्नत नस्ल के बकरों द्वारा प्रजनन की सुविधायें उपलब्ध हैं ।

प्रदेश में वर्तमान में 9 शूकर विकास प्रक्षेत्र कार्यरत हैं । शूकर विकास कार्यक्रम को अधिक प्रभावी बनाने के लिए विदेशों से उन्नत नस्ल के शूकरों का आयात किया गया है । प्रदेश में 346 पशु चिकित्सालयों पर प्रजनन हेतु शूकर उपलब्ध हैं तथा 1992-93 में और चिकित्सालयों पर इस सुविधा में वृद्धि की योजना है ।

अण्डा व कुक्कुट उत्पादन

पौष्टिक व विटामिन युक्त भोज्य पदार्थों में अण्डों का विशेष महत्व है । प्रदेश में अण्डा व कुक्कुट उत्पादन कार्य को प्रोत्साहन देने के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं । वर्तमान में प्रदेश में 46 कुक्कुट प्रक्षेत्र कार्यरत हैं जहां से मुर्गीपालकों को उन्नत नस्ल के चूजे उपलब्ध कराये जाते हैं । ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुट विकास को प्रोत्साहन देने के लिए ग्रामीण शिक्षित बेरोजगार युवकों को स्वतः रोजगार योजना के अन्तर्गत पोल्ट्री प्रोजेक्ट की स्थापना हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है । अण्डा उत्पादन में विशेष रूप से वृद्धि लाने के लिए 15,000 लेयर क्षमता के दो सामुदायिक कुक्कुट कॉम्प्लेक्स क्रमशः लखनऊ व बस्ती में स्थापित किये जा रहे हैं । वर्तमान प्रदेश सरकार द्वारा सहकारिता के आधार पर कुक्कुट पालन की बड़ी ही महत्वाकांक्षी योजना प्रारम्भ की गयी है, जिसमें प्रति सहकारी समिति 50,000 लेयर कुक्कुट पालन के लक्ष्य को स्वीकार किया गया है ।

पशुधन विकास की दीनदयाल योजना

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विकसित करने तथा पशुपालकों को उनके दूध का उचित व लाभकारी मूल्य दिलाने के लिए प्रदेश के आठ जनपदों में दीनदयाल विकास योजना के अन्तर्गत समन्वित पशु विकास की स्वतः रोजगार योजना चलाई जा रही है । इस योजना के अन्तर्गत चयनित युवकों को पशुधन एवं डेरी विकास के लिए आर्थिक सुविधा उपलब्ध करायी जा रही है । इस योजना के अन्तर्गत लगभग 571 व्यक्तियों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त होगा । योजना के अन्तर्गत 79.55 लाख रुपये व्यय के लिए स्वीकार किया गया है । वित्तीय वर्ष 1991-92 में 54.45 लाख रुपये की स्वीकृति प्रदान की जा चुकी है ।

पशुधन के विकास व संरक्षण की दिशा में वर्तमान सरकार विशेष रूप से सचेष्ट है । गोवध निवारण अधिनियम में आवश्यक संशोधन प्रस्तुत करते हुए गोवंशीय पशुओं की सुरक्षा के लिए सचल दस्तों का गठन व गोसदनों का सुधार किया जा रहा है । प्रदेश के इतिहास में पहली बार 10 गोशालाओं को गोशाला विकास के लिए 20.30 लाख का अनुदान स्वीकृत किया गया है । चालू सत्र में गोशालाओं के विकास व सुदृढ़ीकरण के लिए 50 लाख व गोसदनों के विकास के लिए 30 लाख रुपये की योजना स्वीकार की गयी है ।

प्रदेश में दुग्धशाला विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत राष्ट्रीय दुग्धशाला विकास बोर्ड, जिला ग्राम्य विकास अभिकरण व शासन के सहयोग द्वारा अलीगढ़ व इलाहाबाद में 60,000 लीटर प्रतिदिन व नोएडा में 4.00 लाख लीटर प्रतिदिन क्षमता की दुग्धशाला का विकास किया जा रहा है । इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय बात यह है कि 500 लीटर तक की क्षमता वाले दुग्ध व्यवसायियों को लाइसेन्स से मुक्त करते हुए इससे अधिक क्षमता वाले व्यवसायियों की लाइसेन्स फीस की दरों में आवश्यक वृद्धि के साथ ही लाइसेन्स व इसके नवीनीकरण की प्रक्रिया को अत्यन्त ही सरल बना दिया गया है । भारत सरकार के सौजन्य से महिला उत्थान कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रदेश के सीतापुर, हरदोई, बरेली, फर्रुखाबाद व शाहजहांपुर जनपदों में महिला दुग्धशाला समितियों की स्थापना के लक्ष्य को स्वीकार किया गया है । वर्ष 1990-91 व 91-92 में इस योजना के अन्तर्गत 126

समितियों की स्थापना कर 4719 महिलाओं को प्रत्यक्ष रूप से लाभान्वित किया गया है । सहकारिता के माध्यम से दुग्धशाला विकास कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से संचालित करने के लिए प्रदेश के 17 जनपदों में दीनदयाल विकास योजनान्तर्गत सघन मिनी दुग्धशाला परियोजना प्रदेश सरकार के सहयोग से चलायी जा रही है । प्रदेश में अनुसूचित जाति के दुग्ध उत्पादकों की आर्थिक स्थिति में अपेक्षित सुधार लाने के लिए स्पेशल कम्पोनेन्ट योजना के अन्तर्गत गांवों में दुग्ध समितियों की स्थापना की जा रही है । अब तक मैदानी क्षेत्रों में 10 तथा उत्तरांचल में अनुसूचित जाति बाहुल्य क्षेत्रों में दुग्ध समितियों की स्थापना कर सहायता उपलब्ध करायी गयी है ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रदेश सरकार पशुधन व दुग्धशाला विकास की दिशा में विशेष रूप से सचेष्ट है, पर अभी तक पशुधन व पशुपालकों की स्थिति में अपेक्षित विकास व सुधार सम्भव नहीं हो पाया है । अतः आवश्यकता इस बात की है कि पशुओं के नस्ल सुधार व बीमारियों की रोकथाम हेतु और अधिक पशु चिकित्सालय व कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों की स्थापना की जाये, साथ ही दुग्ध संग्रह व दुग्ध विपणन हेतु सहकारी समितियों की भी स्थापना की जाये ।

संदर्भ : (आंकड़ों का संकलन उ. प्र. वार्षिकी 1990-91 व 1991-92 से किया गया है)

अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग
कुंवर सिंह महाविद्यालय
बलिया

गाँव चलें

□ **बलवन्त सिंह हाड़ा** □

आओ गाँव चलें
कुछ उम्मीदें मन में लेकर
नव विकास के चर्चे पढ़कर
हम सब गाँव चलें, आओ गाँव चलें ।।

रोटी कपड़ा हर घर पर
गाँधी के सपनों में सजकर
काँधे हल-कुदाल रखकर
आओ गाँव चलें, हम सब गाँव चलें ।।

पानी पियें हैण्डपम्प जाकर
निर्धूम चूल्हा, चाय बनाकर
रोटी खाते पत्तल दूँने पर
लैम्प जले गैस गोबर पर, आओ गाँव चलें ।।

पेड़ लगे हैं हर गोचर पर
शाला चलती है मंदिर पर
सब मिलते पंचायत घर पर
खेल तमाशे चौपालों पर, आओ गाँव चलें ।।

सहकारी गोदाम यहाँ पर
सस्ता मिलता माल यहाँ पर
प्रौढ़ शिक्षा है जहां पर
ग्राम सेवक एक वहाँ पर, आओ गाँव चलें ।।

बड़े-बड़े अधिकारी आते
नया कृषि विज्ञान बताते
खाद बीज नव यंत्र लाते
बिजली-ट्रैक्टर भी घरांते, आओ गाँव चलें ।।

सी-37, खाल की हवेली
झालावाड़ (राज.) 326 001

ग्रामीण रोजगार और पशुपालन

☐ सुबह सिंह यादव ☐

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एक मौसमी तथा अनियमित व्यवसाय होने के कारण ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार का विश्वसनीय स्रोत नहीं बन पाया है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार प्रदान करने में सम्बद्ध क्रियाएं महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इन सम्बद्ध क्रियाओं में पशुपालन का विशिष्ट महत्व है जो छोटे किसानों/सीमान्त किसानों, महिलाओं तथा भूमिहीनों को लाभप्रद रोजगार प्रदान करने के साथ-साथ दूध, अण्डे, मांस, ऊन, खाल, चमड़ा, गोबर और कृषक को शक्ति तथा खाद उपलब्ध करता है।

राष्ट्रीय आय में पशुधन द्वारा दिये गये योगदान का पता इस बात से लगता है कि 1970-71 में देश के सकल कृषि उत्पादन में इसका अंश 6 प्रतिशत से बढ़कर 1981-82 में 10.5% तथा 1987-88 में 25 प्रतिशत हो गया। जहां छठे दशक में पशुधन से प्राप्त उत्पादन में 1.1% प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई थी, वह बढ़कर सातवें दशक में 4.6% प्रतिवर्ष हो गई। एक अनुमान के अनुसार पशुओं के श्रम का वार्षिक मूल्य 15,000 करोड़ रुपये आंका गया है। अर्थव्यवस्था के सकल घरेलू उत्पादन में पशुधन का उत्पादन वानिकी के योगदान से 7 गुना और मत्स्य पालन से 12 गुना अधिक है। अतः रोजगार प्रदान करने में पशुधन की महत्वपूर्ण भूमिका है। पशुपालन क्षेत्र में पशुधन उत्पादन और उनके स्वास्थ्य के संबंध में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

पशुधन

भारतीय कृषि के यंत्रीकरण की ओर प्रवृत्त होने के बावजूद भी, कृषि प्रणाली की पशुधन पर निर्भरता एक प्राकृतिक विधान बन चुका है। कृषि के विभिन्न कार्य, जुताई, बुवाई, सिंचाई, फसल कटाई, परिवहन आदि में पशु श्रम का प्रयोग किया जाता है। इन कृषि कार्यों का आधार स्तम्भ होने के कारण पशु खेतों के लिए रीढ़ की हड्डी के समान हैं। बैलगाड़ी तथा अन्य भार वाहक पशु बहुत अधिक सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाते हैं। भार खींचने वाले तथा भार ढोने वाले पशु ग्रामीण अर्थव्यवस्था में गति बनाये हुये हैं। देश के दूर दराज गांवों का राष्ट्र की मुख्य धारा से सम्पर्क बनाये रखने में पशुओं की भूमिका उल्लेखनीय है।

खेतों के लिए पशुओं से मिलने वाली खाद के कारण भी पशुधन को बढ़ावा देना उचित ठहराया गया है। अनुमान है कि देश में हर वर्ष पशुओं से 120 करोड़ टन गोबर की उपलब्धि होती है। इससे 40 करोड़ टन गोबर ईंधन के रूप में काम आ जाता है, 22 करोड़ टन गोबर का खाद के रूप में प्रयोग होता है, कुछ को प्लास्टर के काम में लाया जाता है और शेष मात्रा बेकार जाती प्रतीत होती रही है। इसी क्रम में गोबर गैस संयंत्रों द्वारा गोबर में निहित रासायनिक तत्वों को मिथेन गैस के रूप में परिवर्तित करके ईंधन के रूप में और उसके अवशिष्ट भाग को खाद के रूप में प्रयुक्त करने की विधि अपनायी गई है। खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग ने इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है।

पशुधन, दुग्ध, दुग्ध उत्पादनों, मांस, चमड़ा, ऊन आदि विभिन्न उद्योगों के आधार हैं। पशुओं की खाल से अनेक जीवनोपयोगी वस्तुएं बनायी जाती हैं। चमड़े की वस्तुओं का निर्यात करके पर्याप्त विदेशी मुद्रा का अर्जन किया जा सकता है। पशुओं द्वारा देश की जनसंख्या के मांसाहारी वर्ग की आवश्यकताएं पूरी होती हैं। कुल मांस उत्पादन का 75 प्रतिशत भेड़ व बकरियों से प्राप्त होता है। देश का ऊनी उद्योग भी पशुओं पर आधारित है। प्रतिवर्ष कोई 360 लाख किलोग्राम ऊन विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। चूंकि देश का गलीचा उद्योग विदेशी मुद्रा अर्जित करने का महत्वपूर्ण साधन है, अतः योजनाकाल में ऊन का उत्पादन लगातार बढ़ा है।

पशु चर्बी एवं अन्य उत्पाद भी काफी मात्रा में प्राप्त होते हैं। पशुओं से हर वर्ष 6 लाख टन हड्डियां प्राप्त होती हैं, इन हड्डियों से विभिन्न प्रकार की खादें बनाई जाती हैं। इन उत्पादों की कुल वार्षिक मात्रा 24 लाख टन है। पशुओं से प्राप्त पदार्थों के निर्यात से देश को हर वर्ष 400 करोड़ रुपये विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

भारत में पशुधन हेतु विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में किये गये प्रावधानों से इस बात का पता चलता है कि सरकार इस क्षेत्र को कितना महत्व दे रही है। प्रथम योजना में इस क्षेत्र

क्षेत्र के लिए जहां केवल 8 करोड़ रुपये प्रावधान किया गया था, वह सातवीं योजना में बढ़कर 1077 करोड़ रुपये हो गया। आठवीं योजना में यह राशि पशुपालन के लिए 400 करोड़ रु. तथा डेरी विकास के लिए 900 करोड़ रुपये है।

संतुलित भोजन में दुग्ध का महत्व सर्वविदित है। अधिकांश जनसंख्या के शाकाहारी होने के कारण हमारे ग्रामीण भारत में दूध भोजन का एक अनिवार्य अंग बन चुका है। भारत का अतीत भी दूध-दही की नदियों का अतीत है पर समय चक्र के साथ अर्थव्यवस्था कमजोर होती गई और इसका सीधा प्रभाव पशुपालन व्यवसाय की निर्बलता के रूप में सामने आया। भारत में 1960-61 में 20 मिलियन टन दूध का उत्पादन हुआ जो 1986-87 में करीब 46 मिलियन टन हो गया। इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश करने के साथ भारत की जनसंख्या 100 करोड़ के आसपास होगी। यदि उस समय हम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 200 ग्राम दूध प्रदान करने का लक्ष्य रखते हैं तो हमें करीब 76 मिलियन टन दूध की आवश्यकता होगी। दूसरी ओर सरकार ने सन् 2000 के लिये 70 मिलियन टन दूध का लक्ष्य रखा है। अतः पशुपालन व्यवसाय रोजगार प्रदान करने वाला एक बड़ा उपक्षेत्र है। ग्रामीण भारत की काफी जनसंख्या इसे पूर्णकालीन व्यवसाय के रूप में अपना रही है। डेरी उद्योग का विस्तार जिस गति से हुआ, वह सचमुच प्रशंसनीय है। श्वेत क्रान्ति के अन्तर्गत आपरेशन फ्लॅड कार्यक्रम में कार्यशील जनसंख्या को अतिरिक्त रोजगार प्राप्त हुआ है। भेड़ व बकरी पालन व्यवसाय के राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर कार्यरत अनेक निदेशालयों के अतिरिक्त अनेक शोध संस्थान भी स्थापित हुए हैं। मरुस्थल क्षेत्रों में ऊंटों का व्यापार बड़े पैमाने पर किया जाता है। राजस्थान में सांचोर की गायों तथा हरियाणा की मुर्रा नस्ल की भैंस के व्यापार ने ग्रामीण भारत में नई खुशहाली ला दी है। देश के कुछ भागों में घोड़ों का भी सीमित व्यापार होता है।

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड (NDDB) द्वारा 1970 में ऑपरेशन फ्लॅड परियोजना शुरू की गई थी और डेरी सहकारिताओं की संख्या जो 1984-85 में 34,523 थी बढ़कर 1991-92 में 64,000 हो गई। केन्द्र और राज्य सरकारों ने राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अनुसंधानों में सामंजस्य स्थापित करने के लिए डेरी विकास सम्बन्धी तकनीकी मिशन स्थापित किया ताकि कार्यक्रम को ठीक ढंग से क्रियान्वित किया जा सके। आठवीं योजना में प्रमुख पशुधन उत्पादों के लक्ष्य इस प्रकार हैं :

पशुधन उत्पादों के लिये आठवीं योजना के लक्ष्य

क्र. सं.	मद	यूनिट	वर्ष 1989-90	उपलब्धि वर्ष 90-91	वर्ष 91-92	आठवीं योजना के लक्ष्य	वार्षिक वृद्धि दर
1.	दूध	मिलियन टन	51.5	54.9	57.5	70.0	4.01
2.	अण्डे	मिलियन	20204	21342	22751	30000	5.69
3.	ऊन	मिलियन किलोग्राम	41.7	42.0	43.6	50	2.78

भेड़, बकरी एवं सूअर पालन

भेड़, बकरी, खरगोश तथा सूअर पालन जिन्हें "लघु रोमन्थक" का नाम दिया जाने लगा है, का कार्य पूर्णरूपेण ग्रामीण जनसंख्या के ऐसे निर्धन वर्ग द्वारा किया जाता है जो भूमिहीन हैं। लघु रोमन्थक आय प्राप्ति का अच्छा स्रोत हैं। अकेले भेड़ बकरियों से ही प्रतिवर्ष 4,300 लाख किलोग्राम मांस मिलता है, जो देश के कुल मांस उत्पादन का 52 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त दुग्ध, चमड़ा और खाद प्राप्ति इनके पालने के अन्य प्रमुख प्रयोजन हैं। उत्पादन के पहलू से सन्निकट सम्बन्ध रखने के कारण ही भेड़ एवं बकरी पालन पर विशेष ध्यान दिया गया है।

भेड़ पालन

भारतीय भेड़ पालक कृषि समुदाय के गरीबतम वर्ग में से एक है। वह अशिक्षित तथा अपने व्यवसाय में आधुनिक विकास से अनभिज्ञ है। लगभग 70 प्रतिशत भेड़ पालक खाना-बदोश हैं जिनका अपना कोई घर नहीं है। भारत भेड़ों की संख्या की दृष्टि से विश्व का पांचवां बड़ा देश है। भेड़ उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण पहलू है। 1951 से ही भेड़ों की संख्या तथा ऊन उत्पादन में प्रगामी वृद्धि होती रही है। यद्यपि यह वृद्धि मुख्यतः प्राकृतिक कारणों से ही है तथापि योजनाबद्ध रूप से योगदान देने वाले कार्यक्रम को भी थोड़ा श्रेय दिया जा सकता है। भारत में उत्पन्न होने वाली ऊन के 43 प्रतिशत भाग का प्रयोग परिधान बनाने में काम आने वाली तथा 57 प्रतिशत गलीचों में काम आने वाली किस्म की होती है।

भारतीय भेड़ की औसत ऊन तथा मांस उत्पादकता पर यदि हम दृष्टि डालें तो पायेंगे कि राजस्थान राज्य में भेड़ एक वर्ष में औसत 1.4 कि.ग्रा. ऊन देती है, जबकि आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड तथा इंग्लैण्ड की उन्नत नस्ल की भेड़ 5-6 कि.ग्रा. वार्षिक ऊन देती है। भारतीय भेड़ का आकार एवं उसकी ऊन दोनों ही घटिया किस्म की हैं। इसके लिये आवश्यक है कि संकर नस्ल

की भेड़ों का उत्पादन किया जाये । भारत के हिमाचल तथा दक्षिण में नीलगिरी के आसपास के क्षेत्रों में ठण्डी जलवायु एवं चरागाहों के कारण ऊन प्राप्ति हेतु संकर प्रजनन बहुत सफल रहा है । संकर प्रजनित मेष (भेड़ों) किसानों को अनुदान दर पर प्रदान किया जाना चाहिये ताकि उपलब्ध भेड़ों के झुण्ड की श्रेणी को सुधारा जा सके । पहाड़ी क्षेत्रों में तो नहीं, मरुस्थली क्षेत्र में संकर प्रजनन बहुत सफल रहा है । नवीनतम वैज्ञानिक एवं तकनीकी सुविधाओं से युक्त भेड़ प्रजनन केन्द्रों को तुरन्त स्थापित करने की अत्यंत आवश्यकता है । गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, बिहार तथा राजस्थान में ऐसे केन्द्रों के लिये पर्याप्त क्षेत्र हैं ।

पुनर्रुत्पादन प्रक्रियाओं पर उपयुक्त नियंत्रण तथा सम्बद्ध पालन व्यवस्था भी लाभदायक पशुधन के लिये जरूरी है । यद्यपि देश के अधिकतर भागों में भेड़ की प्रजनन प्रक्रिया वर्ष भर चलती है, लेकिन कुछ ऐसे इष्टतम प्रजनन मौसम होते हैं जिसमें जन्म दर अधिक होती है तथा मेमना भी जिन्दा रहकर जल्दी बड़ा हो जाता है । देश के विभिन्न भागों में विभिन्न कृषि जलवायु दशाओं में इष्टतम प्रजनन मौसम को निर्धारित करने के लिये सघन अनुसंधान करने की जरूरत है ।

बकरी पालन

भारतीय अर्थव्यवस्था में बकरियों का योगदान भेड़ों की अपेक्षा तीन गुना है जबकि संख्या की दृष्टि से बकरियां, भेड़ों की अपेक्षा डेढ़ गुना से थोड़ी ज्यादा हैं । भारतीय देशी बकरी अपने एक दुग्ध स्त्रवण काल में 38 किलो दूध देती है इसलिए लघु एवं सीमान्त कृषकों तथा भूमिहीन श्रमिकों के लिये बकरी पालने का काफी महत्व है । बकरी पालने का अर्थ परिवार के लिये पशु प्रोटीन को सुनिश्चित करना है । गाय की डेरी की तुलना में यह ज्यादा मितव्ययी तथा लाभदायक है । शायद इसी कारण से बकरी को गरीब आदमी की गाय कहा गया है । छोटे कद के इस जानवर को यदि अच्छी तरह से खिलाया पिलाया जाए तथा इसकी ठीकठाक देखभाल हो तो परिवार की आय में काफी बढ़ावा हो सकता है । बकरी की विदेशी नस्लें प्रति दुग्ध देने के समय में 600 किलो से भी ज्यादा दूध देती है । बकरी एक दिन में 1 से 6 किलो तक दूध देती है और इसके झुण्ड में श्रेष्ठ बकरी का एक दिन का औसत दूध 4 किलो है । वह भी तब जब उसे उच्च किस्म का दाना खिलाया जाये । स्विटजरलैंड, फ्रान्स, जर्मनी, स्पेन तथा इंग्लैंड के ग्रामीण इलाकों में बकरी डेरी पशुओं के रूप में लोकप्रिय है । यूरोप में तो बकरी के दूध से पनीर निकाला जाता है । हमारे देश में कुल दुग्ध उत्पादन में बकरी के दूध का योगदान 27 प्रतिशत है ।

बकरी की सम्पूर्ण उत्पादकता को चयनित प्रजनन से बदला जा सकता है । साथ में उसे अच्छी तरह खिलाना और ठीक से रखना चाहिये । अन्य पशुओं की तुलना में इसको अधिक बीमारियां होती हैं । लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात व्यवस्थित प्रजनन की ही है । चयनित प्रजनन में उच्च उत्पादकता वाली योजनाओं में नर व मादा बकरियों को ही प्रजनित किया जाता है । दूसरा महत्वपूर्ण कारण झुण्ड में प्रजनन दर के चयन को ध्यान में रखना है । भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा भारतीय बकरी की नस्ल को सुधारने की एक राष्ट्रीय परियोजना आरम्भ की गई है जिसका लक्ष्य विभिन्न कृषि जलवायु दशाओं के अनुकूल दूध देने वाली बकरियों की नई नस्लें विकसित करना तथा दूध देने के 120 दिन के समय में 300 किलो दूध देने के लिए सक्षम बनाना है । मांस के उत्पादन के लक्ष्य को ध्यान में रखकर विभिन्न क्षेत्रों में इनकी नस्ल सुधारने की बात कही गई है ।

बकरी की स्वदेशी नस्ल को सुधारने के लिये संकर तथा विदेश नस्लों का प्रयोग किया जाना चाहिये । मांस की उत्पादकना को बढ़ाने के लिये भी स्वदेशी नस्लों में कुछ का ही चयन करना पड़ेगा क्योंकि भारत में बकरियां प्राथमिक रूप से दूध देने वाली हैं । डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल, केरल कृषि विश्वविद्यालय, असम व कृषि विश्वविद्यालय (गोहाटी), महात्मा फूले कृषि विश्वविद्यालय विद्यापीठ तथा जम्मू कश्मीर के पशुपालन केन्द्र पर इस तरह की परियोजनाएं चलाई जा रही हैं । उच्च नस्ल की बकरी पालने का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण समुदाय के निर्धन वर्ग की दशा सुधारना है । इन्हें रोजाना घर से बाहर ले जाया जाता है और जहां भी पेड़ व पत्तियां उपलब्ध होती हैं, खासकर सामान्य चरागाहों में, वहीं ये घूमती फिरती हैं । शहरों में भी दूध के उद्देश्य से कुछ बकरियां रखी जाती हैं ।

उपर्युक्त बातों से यह पता चला कि बकरी की स्वदेशी नस्ल को सुधारने के लिये एक एकीकृत परियोजना का होना बहुत आवश्यक है । अधिकाधिक छोटे किसानों के बीच लोकप्रिय बनाया जाना चाहिये । इस हेतु देश की वित्त संस्थाओं को आगे आना होगा ।

खरगोश पालन

खरगोश अधिकांशतः जंगलों में पाये जाते हैं और प्राचीन

काल से अब तक की आधुनिकीकरण प्रक्रिया में इनका पालन करना काफी लोकप्रिय रहा है। कृषि की सहायक क्रिया के रूप में अब खरगोश को भी पाला जाने लगा है। खरगोश की उच्च किस्म की विदेशी नस्लें भी उपलब्ध हैं। पहले खरगोश पालन उत्तरी भारत/दक्षिणी भारत के ठण्डे पहाड़ी इलाकों तक सीमित था।

सूअर पालन

सूअर पालन में हाल ही में हुये विकास से पता चलता है कि इसकी छोटी से छोटी इकाई भी बहुत लाभदायक है। यदि दस शूकरी व एक शूकर को पाला जाये तो वर्ष में लगभग 6,500 रुपये की आमदनी हो सकती है। लेकिन सूअर पालन को अभी एक उद्यम या उद्योग के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है। शायद इसका एक कारण यह है कि यह व्यवसाय अधिकांशतः गैर कृषि जातियों तक ही सीमित रहा। चूंकि ये लोग सामाजिक एवं आर्थिक रूप में पिछड़े रहे हैं, इसलिये इन्होंने सदियों पुराना अपना यह व्यवसाय बनाये रखा। अब इन लोगों को शिक्षित तथा संगठित करके इस सहायक क्रिया सूअर पालन को वैज्ञानिक ढंग से चलाने के प्रयास किये जाने चाहिये ताकि ये लोग अपने ज्ञान कौशल तथा अर्जन क्षमता को बढ़ा सकें। सूअर पालन के प्रति एकीकृत दृष्टिकोण अपनाने से इन लोगों की सामाजिक प्रतिष्ठा तो बढ़ेगी ही, साथ ही जीवन स्तर भी सुधरेगा।

मछली पालन

नील क्रान्ति या मछली विकास में प्रगति भारत में एक उत्पादक ग्रामीण व्यवसाय है, जो किसानों की पूरक आय का एक महत्वपूर्ण भाग एवं शानदार स्रोत माना गया है। देश की इस नील क्रान्ति से खाद्य आयात के समाधान के साथ-साथ बेरोजगारी की समस्या भी कम होगी। इसके अतिरिक्त प्रोटीनयुक्त भोजन की कमी से हमारे लोगों के स्वास्थ्य और मानसिक विकास पर पड़ने वाले कुप्रभाव (विशेषकर 12 वर्ष से कम आयु वाले बच्चों पर जो हमारी जनसंख्या का 38 प्रतिशत भाग है) की समस्या को आसानी से हल किया जा सकता है। मछली, जो उच्च किस्म के प्रोटीन का स्रोत है, में मानव पोषण हेतु "अमीनो एसिड" सहित सभी आवश्यक तत्व पाये जाते हैं। यह उन खनिजों तथा फॉस्फोरस का भी अच्छा स्रोत है जिनकी हमारे भोजन में प्रायः कमी पाई जाती है। लेकिन भारत में प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति मछली उपभोग 25 किलोग्राम है, जबकि संतुलित उपभोग के दृष्टिकोण से 20 किलोग्राम होना चाहिए। जापान में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष उपभोग 275 किलोग्राम, डेनमार्क में 21.6 किलोग्राम तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में 5 किलोग्राम है। इस प्रकार हमारे देश में मछली के आवश्यक उपभोग के अनुरूप पूर्ति में कमी है, और जनसंख्या वृद्धि के साथ यह कमी स्वभावतः बढ़ती जा रही है।

मछली विकास का उद्देश्य

भारत सरकार ने निम्न उद्देश्यों से अभिभूत होकर मछली विकास को प्राथमिकता दी है :

1. यह श्रम प्रधान व्यवसाय है और इस प्रकार बड़ी संख्या में समाज के गरीब वर्गों को लाभदायक रोजगार प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा।
2. मछली में निहित प्रोटीन स्वास्थ्य के लिये लाभदायक है। भारत में पोषण के निम्न स्तर के कारण मछली उत्पादन व उपभोग देशवासियों के सामान्य स्वास्थ्य में सहायक होगा।
3. मछली तथा मछली पदार्थ निर्यात की आकर्षक मदें हैं। विशेषकर समुद्रीय मछली विदेशी विनिमय को आकर्षित कर सकती हैं।
4. हमारे देश में भू-क्षेत्रफल का एक बड़ा हिस्सा ऐसा है जो नदियों, समुद्र व अन्य जल स्रोतों से ढका हुआ है और जो फसलोत्पादन के लिए उपलब्ध नहीं है, वहां मछली विकास को विदोहित करके उत्पादकता बढ़ाना।

देश में मछली विकास क्रियाओं को तीन भागों में बांटा जा सकता है। अर्न्तस्थलीय मछली पालन, खारे पानी में मछली की काश्त, तथा समुद्रीय मछली पकड़ना।

1990-91 में 90 करोड़ रुपये के 13,400 मीट्रिक टन समुद्री उत्पादों का निर्यात किया गया। 1991-92 के लिये 1000 करोड़ रुपये मूल्य के 165700 मीट्रिक टन मछली का निर्यात करने का लक्ष्य रखा गया है।

मछली पालन कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से लागू करने के बाद वह दिन नजदीक होगा जब मछली पालन क्षेत्र, रोजगार के विपुल अवसरों को लेकर भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था अपने पूर्ण यौवन के साथ विकसित होगी।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण इस बात का पर्याप्त सूचक है कि भारत में कृषि क्षेत्र की पूरकता के रूप में ग्रामीण रोजगार प्रदान करने में पशुधन का अभिवृद्धित महत्व है। शीघ्रगामी भोजन संस्कृति अपनाये जाने के बाद पशुधन क्षेत्र के विकास में नये आयाम जुड़ गये हैं। अब रोजगार के अवसरों का विस्तार होगा।

प्रबंधक (आयोजना)
बैंक ऑफ बड़ौदा
जयपुर

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम : ज्ञानमाला
लेखक का नाम : राजेन्द्र माथुर

आकाशवाणी, बीकानेर के फार्म रेडियो अधिकारी राजेन्द्र माथुर की पुस्तक "ज्ञानमाला" का लोकार्पण राजस्थान सरकार के तत्कालीन पशुपालन राज्यमंत्री देवीसिंह भाटी ने 12 जुलाई को किया ।

अपने कार्य के अतिरिक्त विविध विषयों पर अनेक पत्र-पत्रिकाओं में लिखने वाले माथुर की इस कृति में पशुपालन व कृषि की जानकारी सरल व आम लोगों को समझ में आने वाली हिन्दी भाषा में दी गयी है । बीस अध्यायों तथा 90 पृष्ठों की "ज्ञानमाला" कृति में कृषि एवं पशुपालन की उपयोगी पारम्परिक तकनीक के साथ नई तकनीक व अनुसंधान का ब्यौरा है ।

पुस्तक के पहले दो अध्यायों में मिट्टी व जल परीक्षण क्यों और कैसे किया जाए, सीमित क्षेत्र में अधिक पैदावार व वृक्षारोपण कैसे किया जाए, बढ़ते औद्योगिक व शहरीकरण के इस दौर में भूमि ह्रास व प्रदूषण को कैसे रोका जाए इन सब विषयों को इस पुस्तक में समेटा गया है ।

पुस्तक के अन्य अध्यायों में अधिक उत्पादन में संतुलित उर्वरकों का महत्व, विभिन्न प्रकार की खादें, कृषि उत्पादन में कम्पोस्ट खाद की महत्ता को अच्छे ढंग से बताया गया है । वहीं बिना बोए उगने वाले अनिच्छित पौधे "खरपतवार" किसानों के शत्रु "चूहे" की समस्या व उसका निराकरण अच्छे ढंग से किया गया है । कृति में कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग व उससे सावधानियों के साथ देश में बढ़ते ऊर्जा के संकट पर चिंता व्यक्त कर लेखक ने ऊर्जा के सस्ते एवं सुलभ स्रोत "गोबर गैस", प्राकृतिक ऊर्जा स्रोत "सौर चूल्हे" तथा अनाज के उचित भंडारण के बारे में विस्तृत जानकारी दी है ।

आकर्षक छपाई की अनेक फोटो से सुसज्जित इस पुस्तक में दुधारू पशुओं की विभिन्न नस्लों, उनको खरीदते वक्त रखी जाने वाली सावधानियां, पशुओं को रोग निरोधक टीके लगाने की आवश्यकता, संतुलित आहार, पशुओं की प्राथमिक चिकित्सा, सूखे एवं अन्य प्राकृतिक विपदा तथा परजीवी से पशुधन की सुरक्षा के बारे में लेखक ने अधिकाधिक जानकारी देने की कोशिश की है ।

कृषि एवं विज्ञान में स्नातक व आकाशवाणी के माध्यम से गांव गांव ढाणी-ढाणी के लोगों से रूबरू होने वाले माथुर ने अपनी इस पुस्तक में कृषि एवं पशुपालन के विकास एवं कठिनाइयों को गहरे अनुभव, उत्तम वैज्ञानिक सोच तथा नए अनुसंधान के साथ लिपिबद्ध किया है । पुस्तक में रेगिस्तान के जहाज ऊंट को स्वस्थ एवं निरोग रखने, बकरी व मुर्गीपालन कर अधिकाधिक लाभ कमाने के तरीकों को बोलचाल की भाषा में बताया गया है ।

आकर्षक कवर की पुस्तक 'ज्ञानमाला" के सभी 20 मनके (अध्याय) कृषि एवं पशुपालन से जुड़े लोगों के साथ तथा कृषि एवं पशुपालन के विद्यार्थियों के लिए सार्थक सिद्ध होगी ।

पुस्तक के प्राक्कथन में राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डा0 हरिज्ञान सिंह ने कहा कि "पर्यावरणीय दृष्टिकोण से पिछड़े राजस्थान के पश्चिमी भू-भाग के कृषि क्षेत्र में भूमि प्रधान तकनीकों के संग्रहण के उद्देश्य से लिखी यह पुस्तक विषय वस्तु के परिप्रेक्ष्य में परिपूर्ण है । इसकी प्रस्तुति अत्यन्त व्यावहारिक है । लेखक ने अपने औपचारिक कृषि अध्ययन और कृषकों तथा कृषि वैज्ञानिकों के साथ नियमित संवाद के अन्तः संबंधों के माध्यम से इसे रचा है । पुस्तक अपने उद्देश्यों को पूरा कर अधिकाधिक कृषकों को जागरूक करेगी ।

समीक्षक : शिवकुमार सोनी
सूचना एवं जनसम्पर्क कार्यालय
बीकानेर : राजस्थान

आर.एन. /708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/92
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : पू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/92
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54